कविग्राम

वर्ष 2, अंक 11, नवम्बर 2021

संस्मरण विशेषांक

झाड़-पोंछ अलबम को
खोल गयी शाम
रात हुई सुधियों के नाम

-सरिता शर्मा

कविग्राम

वर्ष 2, अंक 11, नवम्बर 2021

परामर्श मण्डल
सुरेन्द्र शर्मा
अरुण जैमिनी
विनीत चौहान

सम्पादक
चिराग़ जैन

सह सम्पादक
मनीषा शुक्ला

कला सम्पादक
प्रवीण अग्रहरि

प्रकाशन स्थल
नई दिल्ली

प्रकाशक
कविग्राम फाउण्डेशन

उपरोक्त सभी पद मानद तथा अवैतनिक हैं।

मूल्य
निःशुल्क

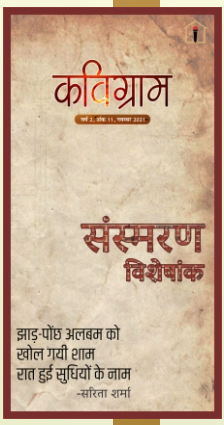

आवरण सज्जा : चिराग़ जैन

पत्रिका में जहाँ भी ऐसा चिह्न बना है वह एक इंटरनेट लिंक है उसे स्पर्श करने पर, संबंधित पृष्ठ खुल जाएगा

इंटरनेट लिंक

kavigram.com
TheKavigram@gmail.com
kavigramfoundation
facebook.com/kavigram
youtube.com/c/KaviGram
8090904560
thekavigram
thekavigram

भीतर के पृष्ठों पर...

सम्पादकीय / यादों का ख़ज़ाना / चिराग़ जैन / 04
जब धर्मसंकट में फँसे कविगण : उदयप्रताप सिंह / 05
रास्ता कैसे कटे : अशोक स्वतन्त्र / 06
जहाँ यमदूत, वहीं देवदूत : मधुप पाण्डेय / 07
शाम-ए-बच्चन : मधुमोहिनी उपाध्याय / 09
तुम बचो नये साल में : घनश्याम अग्रवाल / 10
स्टाइल-ए-हूटिंग : अरुण जैमिनी / 12
प्लेन से चला, बैलगाड़ी से पहुँचा : आशकरण अटल / 13
ज़मीन खोदकर निकाली वारुणी : मनोहर मनोज / 16
नीरज जी का आशीर्वाद : महेन्द्र शर्मा / 18
अदम साहब की मस्ती : जमना प्रसाद उपाध्याय / 19
पहली बार लालक़िला : हेमन्त श्रीमाल / 21
शेर के गले में घण्टी : गुरु सक्सेना / 23
सुधियाँ : डॉ. सरिता शर्मा / 24
हमारा प्रथम अमरीका गमन : प्रो. अशोक चक्रधर / 25
बेतवा पार कवि-सम्मेलन : सुरेश अवस्थी / 29
हिन्दी का देश मॉरीशस : ध्रुवेन्द्र भदौरिया / 32
काश दुनिया ऐसी होती : रमेश शर्मा / 35
लाइव लतीफ़ा : अरुण जैमिनी / 36
डर, अंधेरा और हादसा : रासबिहारी गौड़ / 37
न होने वाला कवि सम्मेलन : मुकुल महान / 39
श्रोता की हाज़िरजवाबी : अरुण जैमिनी / 42
अनोखा अभिनन्दन समारोह : अतुल कनक / 43
कवि कुनबा कलैण्डर / नवम्बर / 47
कवि-सम्मेलन संग्रहालय / ओशो आश्रम / 48
धारदार / अपना-अपना बसन्त / सुभाष काबरा / 50
कचपन प्रतियोगिता परिणाम / 53

यादों का ख़ज़ाना

कविता के अतिरिक्त एक अन्य गुण जो वाचिक परम्परा के कवि की थाती है, वह है यायावरी। झोला उठाये शहर-दर-शहर घूमना उसकी नियति है। इन यात्राओं में न जाने कितनी ही घटनाएँ घटती हैं। यकायक घटित होने वाली इन घटनाओं को जब कोई कवि अपनी स्मृतियों में सहेजता है तो इनके साथ उसकी काव्य-दृष्टि तथा चिन्तन भी दर्ज होता जाता है। बहुत सामान्य-सी प्रतीत होने वाली इन घटनाओं के झरोखे से किसी का चातुर्य, संवेदना, धैर्य और यहाँ तक कि चरित्र भी साफ़-साफ़ दिखायी दे जाता है।

यूँ अन्य लोग भी अपनी यात्राओं के अनुभव लिखते रहते हैं, लेकिन ज्यों ही इन अनुभवों में कवि की संवेदना का समावेश हो जावे तो ये रोचक संस्मरणों में तब्दील हो जाते हैं। कवियों की फ़ाक़ामस्ती से लेकर जान की बाज़ी लगाकर कार्यक्रम में पहुँचने का वायदा निभाने तक की अनेक रोचक घटनाएँ शायद पाठकों को इस बात से अवगत करा सकें कि श्रुति परम्परा के इन काव्य-साधकों का जीवन किन चुनौतियों से भरा है। शायद इन घटनाओं से आप यह समझ सकें कि इतनी सारी चुनौतियों के बावजूद खिलखिलाते हुए जीने का हुनर क्या होता है।

इन संस्मरणों में कवियों की शरारतें भी हैं और संवेदना भी। इनमें किसी दुर्घटना के समय स्वार्थी हो जाने की मानवीय प्रवृत्ति को भी बेबाक़ी से स्वीकार किया गया है और निजी लाभ-हानि को बिसराकर बस कुछ पल जी लेने का सूत्र भी लिखा गया है।

इस अंक को निकालते हुए आदरणीय डॉ. अशोक चक्रधर से चर्चा हुई तो तय हुआ कि उनकी पहली अमरीका यात्रा के अनुभव अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्यों तथा सत्यों से भरपूर हैं, सो 'कवितैव कुटुम्बकम्' शीर्षक से उनका एक स्थायी स्तम्भ भी इस अंक से शुरू किया जावे।

इस अंक में कवियों के आँसू और मुस्कान, दोनों दर्ज हैं। खट्टी, मीठी, कसैली और कहीं-कहीं कड़वी यादों का यह दस्तावेज़ कविग्राम के इस कुनबे के अपनत्व को और प्रगाढ़ कर सकेगा; क्योंकि याद ही वह सूत्र है, जो सम्बन्धों के मध्य सूत्र बनकर नेह प्रवाहित करता रहता है।

चिराग़ जैन

जब धर्मसंकट में फँसे कविगण

● उदयप्रताप सिंह

मई 1964 में नेहरू जी की मृत्यु हुई थी। इस घटना के सात-आठ महीने बाद भिण्ड में एक कवि-सम्मेलन हुआ जिसमें देश के प्रतिष्ठित कवियों की उपस्थिति थी। भवानी प्रसाद मिश्र जी उसकी अध्यक्षता कर रहे थे। भवानी दादा उस वक़्त खादी उद्योग के चेयरमैन थे, कांग्रेस से बहुत जुड़े हुए थे और नेहरू परिवार से बहुत जुड़े थे।

उदय प्रताप सिंह

कवि-सम्मेलन में नीरज जी ने नेहरू जी को याद करते हुए एक कविता पढ़ी कि 'चलता-फिरता जादू था वो एक चौहत्तर साल का...।' बहुत बढ़िया कविता थी। कविता सुनकर भवानी दादा ने रोना शुरू कर दिया और एकदम खड़े होकर बोले कि इसके बाद अब कोई कविता नहीं होगी। कवि-सम्मेलन समाप्त किया जाता है।

भवानी दादा ने तो घोषणा करके कवि-सम्मेलन समाप्त कर दिया लेकिन भिण्ड की जनता जो दूर-दूर से कवि-सम्मेलन सुनने आई थी। वह बीच रात में कहाँ जाती। मंच के ठीक पीछे ही कवियों के ठहरने की व्यवस्था थी। कवि-सम्मेलन समाप्ति की घोषणा के साथ ही रमानाथ अवस्थी जी, रामअवतार त्यागी जी, देवराज दिनेश जी व अन्य सभी कवि मंच से उतरकर भीतर चले गये।

हम उस समय बिल्कुल नये थे। मुझे याद है, एक धीरज शुक्ला, एक भारत भूषण, सोम जी और हम लड़के-लड़के रह गये। हमें जनता ने घेर लिया कि कवि-सम्मेलन फिर से शुरू होगा। हम लोकल थे, हम जनता के अनुग्रह को नकार नहीं सकते थे, सो हम चारों ने फिर से सुनाना शुरू किया। एक-एक करके हम चारों ने काव्यपाठ किया। तब तक रमानाथ जी, देवराज जी इत्यादि सभी कवि वापस मंच पर आ गये। बस भवानी दादा और नीरज जी नहीं आए।

जनता के अनुग्रह और वरिष्ठ कवि के आदेश के मध्य धर्मसंकट में फँसे प्रत्येक कवि ने यह कहकर काव्यपाठ किया कि भवानी दादा हमारे पूज्य हैं। लेकिन हम जनता की भावना का सम्मान करने के लिए कविता पाठ कर रहे हैं, न कि भवानी दादा के आदेश की अवहेलना करने के लिए। ●

रास्ता कैसे कटे

● अशोक स्वतन्त्र

एक यात्रा में एक कवि ने साथ बैठी कवयित्री से पूछा— 'अमुक कवि का फ़लां गीत सुना है?'

वे बोलीं— 'बहुत अच्छा गीत है, उनका स्वर भी बहुत अच्छा है। बात आगे नहीं बढ़ पायी।

कुछ पल बाद वे बोले— 'फ़लां कवि की ग़ज़लें सुनीं आपने?'

वे बोलीं— 'बहुत ही बढ़िया हैं।'

इस तरह से पाँच-छह कवियों का प्रसंग उस कवि ने उठाया और कवयित्री ने उन सबकी प्रशंसा करके आगे चर्चा का स्कोप समाप्त कर दिया।

थोड़ी देर बाद कार एक ढाबे पर रुकी। वहाँ से चलने लगे तो उस कवि ने अपनी सीट बदली, पीछे आकर बैठ गया और मुझसे बोला— 'भाई मैं ना बैठ सकता उसके साथ। जिसकी बात शुरू करो, उसी की प्रशंसा शुरू कर दे। कोई कैसे झेल सके ऐसी औरत को!' ●

जहाँ यमदूत वहीं देवदूत

● मधुप पाण्डेय

घटना बिहार की है। होली के कार्यक्रमों की शृंखला में दरभंगा का आयोजन करके हम सभी कवि मुज़फ़्फ़रपुर रेलवे स्टेशन के वेटिंग रुम में बैठे थे। चार बजे तक कवि-सम्मेलन चला था, सो सभी सभी लगभग ऊंघने की अवस्था में थे। अन्य सभी कवियों को अपने-अपने नगर वापस लौटना था लेकिन मुझे भागलपुर जाना था। मुज़फ़्फ़रपुर से भागलपुर के लिए सुबह एक ट्रेन चलती है। होली के कारण वेटिंग रूम लगभग ख़ाली था। हम कवि, आयोजनों की शृंखला में प्रस्तुति और प्राप्त धन पर सहज बातचीत कर रहे थे।

मधुप पाण्डेय

केवल एक व्यक्ति साफ़-सुथरे कपड़े पहने, अपने दस-ग्यारह साल के बच्चे के साथ हम लोगों की बातचीत सुन रहा था। कुछ समय बाद अन्य सभी कवि अपनी-अपनी ट्रेन पकड़कर निकल गये। मैं, वह व्यक्ति और उसका बच्चा, वेटिंग रूम में रह गये। वह व्यक्ति मेरे पास आया, मेरा सूटकेस उठाया और बोला— 'चलिये कविजी, मुझे भी भागलपुर जाना है। आप इस क्षेत्र से परिचित नहीं हैं। साथ रहेगा।

बिहार! होली!! अनजाना व्यक्ति!!! ...मैं आशंकित था, परन्तु उसके साथ में बच्चे को देखकर मैंने विश्वास कर लिया।

मेरे लिये बर्थ पर चादर बिछाकर उसने आग्रह किया कि आप रात भर के जागे हैं, थोड़ा आराम कर लें। इतना कहकर वह वह चाय-बिस्कुट ले आया। जीवन भर कवि सम्मेलन में प्रस्तुति के लिये प्रवास ही किया है, इसलिये मैं सतर्क था।

मैंने बिस्कुट लेने से मना कर दिया। वह मेरे मन की बात भाँप गया और बोला— 'आपका आशंकित होना सही है। लीजिये, मैं आपके सामने आधा बिस्कुट खाता हूँ, आप बाक़ी आधा ले लीजिये। अविश्वास करने का कोई कारण नहीं था। पहले ही नीन्द आ रही थी, फिर उस आधे बिस्कुट ने जाने क्या किया... ! बिस्कुट खिलाने वाला कब, कहाँ उतर गया, मुझे पता नहीं चला। मैं अपनी बर्थ पर बेहोश पड़ा था।

ट्रेन के उसी डिब्बे में एक अन्य श्रोता यात्रा कर रहा था। वह अपनी पीठ पर कपड़े का गट्ठा लादकर गाँव-गली में कपड़े बेचनेवाला था। मेरे कवि के रूप को वह दरभंगा में देख चुका था। अत्यंत प्रभावित था। मुझे डिब्बे में बेहोश पड़ा देखा तो किसी तरह मुझे और सूटकेस को लादकर वह सरकारी अस्पताल पहुँचा। होली के कारण रिक्शा, दुकान, अस्पताल सब बन्द थे। केवल सरकारी अस्पताल में इमरजेंसी कक्ष खुला था। मेरे सौभाग्य से इमरजेंसी में उपस्थित डॉक्टर भी मुझे चेहरा देखकर पहचान गये। टीवी पर कई बार उन्होंने मुझे देखा था।

डॉक्टर ने सूचना देने की दृष्टि से मेरे सूटकेस को टटोला। उसमें मेरी डायरी और पता मिल गया। डॉक्टर ने मेरे घर पर फोन कर श्रीमती को सूचना दी। मेरी आदत थी कि मैं कवि-सम्मेलनीय प्रवास के लिए घर से निकलते समय उस यात्रा से संबंधित आयोजकों के नाम तथा फोन नम्बर श्रीमती जी को लिखकर दे जाता था।

सूचना मिलने पर पत्नी ने किसी तरह अपने आपको सम्हाला और दरभंगा के आयोजक को सूचना दी। दरभंगा के आयोजक नगर के महापौर थे। आते ही उन्होंने डॉक्टर से कहा— 'कुछ भी कीजिये डॉक्टर साहब। बिहार की प्रतिष्ठा का प्रश्न है। मधुपजी हमारे अतिथि हैं। उनकी प्राणरक्षा हमारा सबका दायित्व है।'

डॉक्टर से लेकर आयोजकों ने वह सब कुछ किया जो उनके लिये सम्भव था। चौबीस घंटे बाद मुझे होश आया। होश आते ही मुझे पूरा घटनाक्रम बताया गया।

मुझे लगा कि मैं उसे धन्यवाद दूँ, जिसने मेरी प्राणरक्षा की। मैंने उस देवदूत के बारे में पूछा। लेकिन आश्चर्य! पता नहीं वह व्यक्ति कहाँ चला गया था। डॉक्टर ने बताया कि वह भूखा-प्यासा, तब तक उपस्थित रहा, जब तक मुझे होश नहीं आया। उस ने डॉक्टर को अपनी हथेली पर लिखी 'माँ' कविता की पंक्तियाँ दिखाई थीं, जो उस रात कवि-सम्मेलन में उसने काग़ज़ न मिलने पर हथेली पर ही लिख ली थीं। परन्तु मुझे होश आते ही वह कहाँ और क्यों चला गया, पता नहीं चला।

मुझे अनुभूत हुआ कि बच्चे की रक्षा में अर्पित माँ और एक सामान्य नागरिक की प्राणरक्षा में अर्पित उस अनजान व्यक्ति में कोई अन्तर नहीं है। 'यमदूत' से रक्षा करनेवाले दोनों ही 'देवदूत' हैं।

शाम ए बच्चन

मधुमोहिनी उपाध्याय

1 अक्टूबर 2005 की बात है मैं अपने काव्यगुरु पद्मश्री अशोक चक्रधर जी के साथ शताब्दी एक्सप्रेस में यात्रा कर रही थी। यात्रा के मध्य अशोक जी किसी पत्रिका में छपी अपनी कविता दिखाने लगे, तो विज्ञापन में अमिताभ बच्चन जी की फोटो देखकर अकस्मात मेरे मुख से निकला कि मेरी प्रबल इच्छा है कि मैं कविता पढ़ूँ और अमिताभ जी सामने बैठे हों।

इस घटना के 8 दिन बाद मेरे पास अशोक जी का फोन आया कि 27 नवम्बर को शाम-ए-बच्चन में आपको काव्य पाठ करना है। हरिवंशराय बच्चन जी की पुण्यस्मृति में ये कार्यक्रम होगा, जिसमें अमिताभ बच्चन जी, जया जी, अभिषेक जी और देश के प्रतिष्ठित प्रबुद्ध जन उपस्थित रहेंगे। सहारा सिटी में आयोजित इस कवि-सम्मेलन की स्मृतियों को आज भी जस की तस हैं। अमिताभ जी से व जया जी से भेंट करना मेरे जीवन का अविस्मरणीय क्षण है। प्रबल इच्छा इतनी शीघ्र सुफलदायी होगी ऐसा अनुमान भी नहीं था।

तुम बचो नये साल में

घनश्याम अग्रवाल

● घनश्याम अग्रवाल

बात 2005-06 की है, मुम्बई के हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कार्यालय में हिन्दी दिवस पर आयोजित कवि सम्मलेन में शैलजी, हुल्लड़जी और सुभाष काबरा के साथ मैं भी था। प्रमुख आयोजक वहाँ के वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी राजीव सारस्वत थे। उन्हें भी मैं अपने नववर्ष के ग्रीटिंग भेजता रहा। 2006 में मुम्बई में लोकल ट्रेन पर आतंकी हमला हुआ, जिसमें प्रसिद्ध हास्य कवि श्याम ज्वालामुखी भी मारे गये।

इस हृदय-विदारक घटना ने मुझे इतना विचलित किया कि मेरा 2007 का नववर्ष का ग्रीटिंग इसी पर बना, जिसमें इस घटना के चित्र सहित आतंकवाद पर कविता भी थी। ग्रीटिंग के अन्त में शुभकामना देते हुए मैंने लिखा था— 'हम तो बच गये, गये साल में, आप बचो नये साल में।'

यह ग्रीटिंग क़ाफ़ी चर्चित हुआ। मैंने औरों की तरह राजीव सारस्वत जी को भी यह ग्रीटिंग भेजा। नवम्बर 2008 में मुम्बई के ताज होटल पर फिर आतंकवादी हमला हुआ। इस हमले के एक दिन पूर्व किसी ने राजीव सारस्वत जी का इण्टरव्यू लिया। इण्टरव्यू के अन्त में पूछा गया कि, "इन दिनों आतंकवादी घटनाएँ बहुत बढ़ गयी हैं, इसके बारे में आप क्या कहना चाहते हैं?"

राजीव सारस्वत जी ने इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा— "सच में ज़िन्दगी का कोई भरोसा नहीं रहा। आप बाज़ार जा रहे हों, दफ़्तर जा रहे हों या किसी से मिलने जा रहे हों, पता नहीं कब किसी आतंकवादी की गोली आपको लग जाये। मौत कब, कहाँ और किस रूप में आ जाये; कोई नहीं जानता। आतंकवादियों ने मौत को ज़िन्दगी के और क़रीब ला दिया। ऐसे में घनश्याम अग्रवाल जी ठीक ही कहते हैं कि, 'हम तो बच गये, गये साल में, आप बचो नये साल में।' आतंकवाद के बारे में बस यही कहना चाहूंगा।"

इतना कहकर हिन्दुस्तान पेट्रोलियम की एक ज़रूरी बैठक; जो होटल ताज में होनी थी; उसके इंतज़ाम हेतु होटल ताज चले गये। और वहीं आतंकवादियों ने उन पर गोलियाँ बरसा दीं। दो-तीन समाचार-पत्रों में इस घटना का मेरी कविता सहित उल्लेख भी हुआ।

मुझे इसकी विस्तृत जानकारी तब हुई, जब मुम्बई के व्यंग्यकार अनन्त श्रीमाली जी ने मुझे बताया— "हमारी संस्था श्रुति संवाद आपके लघुकथा संग्रह 'अपने-अपने सपने' का विमोचन मुम्बई में पुष्पा भारती जी के हाथों, सूर्यबाला जी की प्रमुख उपस्थिति में एक भव्य समारोह के रूप में करना चाहती है। सारा इंतज़ाम हम करेंगे। आपको बस आना है।"

मुझे आश्चर्य मिश्रित ख़ुशी हुई। मैंने कहा— "ये तो मेरे लिए परम सौभाग्य की बात है। मगर न तो मैं इतना बड़ा साहित्यकार हूँ, न मैं आपकी संस्था का सदस्य हूँ; और तो और, मैं तो मुम्बई में रहता भी नहीं हूँ, फिर इतनी दूर से मुझे बुलाकर मेरा इतना सम्मान क्यों?"

तब अनन्त जी ने बताया— "राजीव सारस्वत हमारी संस्था के प्रमुख हस्ताक्षर थे। आपके ग्रीटिंग की कविता पढ़कर वे जिस तरह आतंकवादी हमले में शहीद हुए, उससे हमारी पूरी संस्था बुरी तरह विचलित हो गयी। तब संस्था के तमाम सदस्यों ने यह निर्णय लिया कि राजीव सारस्वत जी की याद में एक साहित्यिक समारोह किया जाए और उसमें घनश्यामजी को सम्मानित किया जाए, जिनकी पंक्तियाँ पढ़कर वे आतंकवादी हमले में शहीद हुए।"

9 फरवरी 2009 को यह समारोह गरिमापूर्ण ढंग से सम्पन्न हुआ। यह अजीब-सा झकझोर देनेवाला इत्तेफ़ाक़ है कि मुम्बई के पहले आतंकवादी हमले के शिकार श्याम ज्वालामुखी की स्मृति में दिया जानेवाला 'श्रेष्ठ मंचीय कवि' का पहला पुरस्कार भी मुझे मिला। और दूसरे हमले के शिकार राजीव सारस्वत स्मृति सम्मान व पुरस्कार भी मुझे मिला।

आज जब भी क़लम को स्पर्श करता हूँ, ये घटनाएँ मेरी क़लम में उजागर हो जाती हैं ...कुछ अच्छा लिखने की प्रेरणा बनकर। ●

स्टाइल ए हूटिंग

● अरुण जैमिनी

आईआईटी, दिल्ली में कवि सम्मेलन था। कोई श्रेष्ठ संचालक टीम में न होने के कारण संचालन मुझे ही करना था। तभी मेरे पास लगभग पचास वर्षीय एक व्यक्ति आया। उसने बताया कि वह पहले फ़ौज में था, पर अब यहाँ कार्यरत है। कविता लिखने का शौक़ है, इसलिए वह भी कवि-सम्मेलन में कविता पढ़ना चाहता था। आईआईटी में कार्यरत ऊपर से भूतपूर्व फ़ौजी; सो मना करने का कोई प्रश्न ही नहीं था।

कवि-सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। एक-दो कवियों के बाद मैंने उन्हें पूरी भूमिका के साथ आमन्त्रित किया। भूमिका में मैंने वही सब बातें दोहरा दीं, जो उन्होंने अपने परिचय में बतायी थीं। वे मंच से उठे और लेफ़्ट-राइट करते हुए माइक तक पहुँचे। फिर श्रोताओं को सेल्यूट मारा और बोले— 'जवान कविता शुरू करेगा, शुरू कर।' इसके बाद वे विश्राम की मुद्रा में आये और काव्य पाठ प्रारम्भ किया।

कविता तो कमज़ोर थी, पर श्रोता शान्त रहे। दो-तीन मिनट बाद श्रोताओं के बीच से उस सन्नाटे को चीरती हुई एक आवाज़ आयी— 'जवान पीछे मुड़ेगा पीछे मुड़।'

पूरा सभागार ठहाकों से भर गया। हूट करने के इस शानदार तरीक़े के कारण ये संस्मरण सदा के लिए मेरे मस्तिष्क में अंकित हो गया। ●

आशकरण अटल

प्लेन से चला बैलगाड़ी से पहुँचा

● आशकरण अटल

उन दिनों मनोरंजन की दुनिया में सिनेमा के बाद कवि-सम्मेलन दूसरे स्थान पर पहुँच चुका था और मैं हर एंगल से एक अखिल भारतीय कवि बन चुका था। (यह तारीफ़ नहीं सूचना है।) एक अखिल भारतीय कवि होने के लिए कवि में निम्नलिखित योग्यताएँ देखी जाती थीं— पहली, जो देश के सभी बड़े मंचों पर काव्यपाठ कर चुका हो। दूसरी जो प्रतिष्ठित पत्रिकाओं के विशेषांकों में छप चुका हो। तीसरी, जो सुरेन्द्र शर्मा जी की टीम में स्थान पा चुका हो। और अन्तिम, जो अपने सूटकेस में एक पव्वा या हाफ लेकर चलता हो।

वैसे चौथी अन्तिम योग्यता के अनुसार तो भाई हरिओम पँवार और प्रिय अरुण जैमिनी अब तक अखिल भारतीय कवि नहीं हो पाये हैं। ख़ैर, मैं तब तक 'क्या हमारे पूर्वज बन्दर थे', 'विश्वामित्र द्वितीय यानी मैं' और 'केले का छिलका वर्सेस प्रधानमन्त्री का लड़का' जैसी कालजयी कविताएँ लिख चुका था और धर्मयुग में दो बार 'फुल पेज' पर छप चुका था।

मैं मंच पर उपयोगी तो था, लेकिन मंच की ज़रूरत नहीं बन पाया था। मंच की ज़रूरत मैं उस कवि को कहता हूँ, जिसका पारिश्रमिक

वह ख़ुद तय करता है; और उपयोगी कवि वह होता है, जिसका पारिश्रमिक आयोजक तय करता है। मैंने एक परिभाषा दी थी –'हिट कवि की पहचान, जेब वाली बनियान।' सारे हिट कवि, होली और दशहरे के कार्यक्रम करके घर लौटते थे तब जेब वाली बनियान के कारण कंगारू की जून को प्राप्त लगते थे। मेरे पास एक भी जेब वाली बनियान नहीं थी।

सत्तर-अस्सी के दशक की बात है। मैं मधुप पाण्डेय जी की टीम का लगभग स्थाई सदस्य बन चुका था। मधुप जी का नागपुर के आसपास और पूरे विदर्भ के मंचों पर एकछत्र राज्य था। मैं मधुप जी को कवि सम्मेलनों का कोलंबस कहता हूँ। उन्होंने कवि सम्मेलनों को विदर्भ के इन्टीरियर इलाकों तक पहुँचा दिया था। मोहन कॉलरी, न्यू माजरी कॉलरी, न्यूटन चिकली,और पता नहीं कहाँ-कहाँ! ऐसी-ऐसी जगह कवि-सम्मेलन करवाये, जहाँ कोई सोच भी नहीं सकता था। मधुप जी अपने कवि सम्मेलन की टीम बनाते समय हमेशा उस कवि को प्राथमिकता देते थे जो स्वीकृति देने के बाद में कोई बहाना न बनाए। हर हाल में पहुँचे। वरना हमेशा-हमेशा के लिए टीम से बाहर।

बात सन् 1986 की है। मधुप जी ने मुझे एक तारीख़ लिखवायी। जो तारीख़ लिखवायी, उस तारीख़ से एक दिन पहले मेरा कश्मीर में प्रोग्राम था। उस हिसाब से मुझे अगले दिन सुबह ही कश्मीर से चलकर मधुप जी के प्रोग्राम में 'न्यू माजरी कॉलरी' पहुँचना था। रूट और टाइम टेबल खंगाला तो तय हुआ कि मुझे प्लेन द्वारा कश्मीर से दिल्ली, दिल्ली से नागपुर पहुँचना है। नागपुर से दोपहर में ट्रेन पकड़कर चंद्रपुर पहुँचना है; चंद्रपुर से आठ-दस किलोमीटर आगे बस पकड़कर न्यू माजरी कॉलरी पहुँचना है। मैंने मधुप जी को स्वीकृति दे दी। लेकिन यह बताया नहीं कि इतना लम्बा रूट तय करके पहुँचूंगा। अगर बता देता तो वे मुझे बुक करने की जोख़िम नहीं उठाते।

महान हिंदी सेवक मधुप पांडेय जी ने तो कोलंबस बनकर न्यू माजरी कॉलरी नामक मंच खोज लिया। अब कोलंबस बनने की मेरी बारी थी और मुझे हर हाल में वहाँ पहुँचना था। इंडियन एयरलाइंस में फोन किया तो पता चला श्रीनगर से दिल्ली तक इकॉनमी क्लास फुल है। सिर्फ़ एग्ज़ीक्यूटिव क्लास में एक टिकट उपलब्ध है। मेरा

आयोजक बड़े दिलवाला निकला। उसने श्रीनगर से दिल्ली तक एग्ज़ीक्यूटिव क्लास में और दिल्ली से नागपुर तक इकॉनमी क्लास में टिकट बुक करा दिया। मैं सही समय पर नागपुर पहुँच गया, और चन्द्रपुर का टिकट ख़रीद कर ट्रेन में बैठ गया। ट्रेन चली तो टाइम पर, लेकिन टाइम पर पहुँची नहीं। पता चला, न्यू माजरी कॉलरी की डायरेक्ट बस जा चुकी है। हाँ, एक और बस उसी रूट पर जाने वाली है जो न्यू माजरी कॉलरी से चार किलोमीटर पहले उतार देगी।

उस बस ने मुझे मेरी मंज़िल से चार किलोमीटर दूर एक चाय की दुकान पर उतार दिया। वहाँ न टैक्सी उपलब्ध थी, न कोई कुली। रात के आठ बज चुके थे। मैंने हिसाब लगाया— अब मधुप जी मंच पर पहुँच गये होंगे। सारे कवि सफ़ेद गद्दों पर बैठ गये होंगे। मधुप जी ने अपने चिर-परिचित अन्दाज़ में श्रोताओं को 'रसिक मित्रो!' सम्बोधन से सम्बोधित कर दिया होगा। मैंने मन में सोचा— 'माइक मुझसे मात्र चार किलोमीटर दूर है। मुश्किल से आधे घण्टे का रास्ता। अगर यह भारी अटैची न होती, तो दौड़कर पहुँच जाता। तभी जैसे ही मेरा ध्यान अटैची के पहियों पर गया, मुझे मेरा लिफ़ाफ़ा सुरक्षित लगने लगा। मैंने अटैची खींचकर, पैदल जाने का फैसला करते हुए चायवाले को चाय का ऑर्डर दिया।

अपना लिफ़ाफ़ा सुरक्षित जानकर, कश्मीर की वादियों को याद करते हुए मैं चाय पीने लगा। तभी पता नहीं कहाँ से एक खाली बैलगाड़ी आकर चाय की दुकान पर रुकी। ...मुझे लगा ये बैलगाड़ी नहीं, पौराणिक टैक्सी है। जो माँ सरस्वती ने मुझे मंच तक पहुँचाने के लिए भेजी है। बैलगाड़ी वाला बीस रुपये में तुरंत चलने के लिए तैयार हो गया।

वहाँ कॉलरी में खुले मैदान में कवि-सम्मेलन था। मेरी 'बैलगाड़ी टैक्सी' मंच के पास आकर रुकी। तब तक कवि-सम्मेलन शुरू नहीं हुआ था। बस कवि आकर बैठे ही थे। मुझे बैलगाड़ी से उतरते देखकर मंच पर कानाफ़ूसी होने लगी। आयोजकों ने पास आकर मेरा स्वागत किया और मुझे माला पहनायी। तब बैलगाड़ी वाले को भी लगा कि जिस सवारी को वह लाया है, वह कोई टटपुंजिया सवारी नहीं है। मेरे चेहरे पर विजयी मुस्कान थी और मधुप जी के चेहरे पर सन्तोष का भाव।

ज़मीन खोदकर निकाली वारुणी

मनोहर मनोज

● मनोहर मनोज

सन् 1975 के आसपास, जब भी मन होता एक पोस्टकार्ड लिखकर श्रद्धेय मुकुट बिहारी सरोज जी को दो आयोजनों के लिये कटनी बुलवा लेता था। दोनों कवि-सम्मेलनों में दो दिन का अन्तर रखता था। एक दिन पूर्व आना और साथ में धर्मपत्नी (पूज्यनीया गायत्री जी) को लाना अनिवार्य होता था, ताकि तीन-चार दिन ख़ूब आनन्द से गुज़रें।

एक आयोजन कैमोर और दो दिन बाद कटनी के पास बरही का लिख देता था। पारिश्रमिक न उनने कभी तय किया और न मैंने कभी लिखा। साल दो साल में यह क्रम चलता रहता था। न कहीं कवि-सम्मेलन रहता था, न कोई आयोजन। बस सरोज जी और गायत्री जी कटनी आ जाते और फिर मेरा और उनका दौर शुरू हो जाता, वारुणी पान का। सरोज जी ने बताया- 'मनोज, शराब को संस्कृत में तीर्थ कहते हैं।'

एक बार संयोग से सुरेश उपाध्याय भी अचानक आ गये। कटनी से पाँच किलोमीटर दूर मेरा फॉर्महाउस है, जिसका नाम है 'संन्यास'। तिकड़ी वहाँ जाकर जमती। एक दोपहर हम तीनों एक हाफ लेकर पहुँच गये संन्यास। बैठक जमी। शाम पाँच बजे तक बोतल तो ख़ाली हो गयी पर मन नहीं भरा। अब पाँच किलोमीटर लौटकर

कौन लाये। सरोज जी थे, कि किशोर बालक की तरह हींड़ रहे थे— 'मनोज, जल्दी और व्यवस्था करो।'

मैंने कहा— 'दादा, इस जंगल में व्यवस्था नहीं हो सकेगी।' पर मुकुट बिहारी सरोज जी अपनी ही ज़िद्द पर थे कि कुछ भी करो अन्यथा प्राण देह त्याग देंगे। सुरेश उपाध्याय जी भी उनके समर्थन में हो गये। मैंने कहा— 'एक रास्ता है, व्यवस्था हो जायेगी।'

यह सुनते ही दोनों अतीव प्रसन्न। मैंने कमरे के एक कोने में रखी गेंती, सब्बल और फावड़े की ओर इशारा किया और कहा— 'चलो, इनको लेकर चलते हैं।'

मैं गेंती लेकर आगे-आगे। मेरे पीछे सब्बल लेकर सुरेश उपाध्याय और उनके पीछे फावड़ा लिये सरोज जी। मैं उन दोनों को बगीचे में अमरूद के एक पेड़ के नीचे ले गया, फिर कुछ गणित लगाते हुए मैंने अमरूद के पेड़ से पूर्व दिशा की ओर बीस क़दम बढ़ाये और दाहिनी ओर दस क़दम बढ़ा कर रुक गया। दोनों कविश्रेष्ठ कौतूहल से मेरा अनुगमन कर रहे थे। जहाँ मैं रुका वहाँ एक सीमेंट का गमला था। मैंने गमला हटाया और सुरेश उपाध्याय जी से कहा— 'यहाँ आहिस्ता खोदिए।' सुरेश भाई ने ज़मीन खोदनी शुरू की।

थोड़ी देर बार मैंने कहा— 'अब आप ठहरिए! अब दादा आहिस्ता से गमले में रखी खुरपी उठाकर हल्के हाथ से मिट्टी हटाकर इस क्रिया को आगे बढ़ायेंगे।'

उत्साहित होकर सरोज जी ने दो मिनिट ही खुरपी चलायी और एकदम से खड़े होकर नाचने लगे। बोले, ढक्कन दिख गया। फिर आहिस्ता से ज़मीन में गड़ी एक बोतल वारुणी की निकाल कर आगे-आगे नाचते हुए कमरे में आ गये। छक कर तीर्थपान हुआ।

दरअस्ल मैं दो-चार बोतलें अपने बगीचे में चिह्नित स्थान पर ज़मीन में छिपा देता हूँ और कम मात्रा में घर से लेकर चलता हूँ; ताकि वहाँ कम हो जाए और इस तरह से प्राप्त की जाए। इससे वारुणी का महत्त्व और बढ़ जाता है। साथ ही कवि मित्रों के चेहरे पर जो आनन्द झलकता है वह अद्‌भुत रहता है।

वापस घर लौटने पर देखते हैं कि पूज्यनीया गायत्री जी मेरी पत्नी को अजवायन से बघार कर भिण्डी बनाना सिखा रही हैं। सरोज जी को

तो आते ही बता देता था कि दोनों आयोजन स्थगित हो गये हैं, पर दो दिन बाद विदा करते वक़्त उनकी जेब में एक लिफ़ाफ़ा यह कहकर रख देता था कि यह स्थगित हुए कवि-सम्मेलनों का अग्रिम है।

सरोज जी के साथ जब भी समय गुज़ारना होता, तो मैं यही करता था। वे भी जानते थे कि कोई आयोजन नहीं है, फिर भी आ जाते थे। आज सरोज जी नहीं हैं पर उनके साथ बिताये पल, यादों में कौंधकर आँखें भिगो जाते हैं। ●

नीरज जी का आशीर्वाद

● महेन्द्र शर्मा

जब मैंने कवि-सम्मेलनों में जाना शुरू किया तब तत्कालीन लोकप्रिय, बड़े कवियों के सान्निध्य में कविता पाठ करना मेरे लिए गौरव का विषय था। उन दिनों मेरी कविता 'रामलीला बनाम कवि-सम्मेलन' बहुत हिट हुई। इस दौरान मुझे आदरणीय सुरेन्द्र शर्मा जी, अशोक चक्रधर जी, अल्हड़ बीकानेरी जी और ओमप्रकाश आदित्य जी के साथ कविता पढ़ने का सौभाग्य मिला। उस समय मेरी एक ही इच्छा थी कि मुझे श्रद्धेय नीरज जी के साथ काव्यपाठ करना है। देहरादून में दैनिक हिन्दुस्तान समाचार पत्र के वरिष्ठ पत्रकार त्रिवेदी जी ने ओएनजीसी के कवि-सम्मेलन में मुझे यह अवसर दिया।

इस भव्य मंच की अध्यक्षता कर रहे थे श्री गोपालदास नीरज जी और मंच संचालन कर रहे थे त्रिवेदी जी। मुझे सबसे पहले कविता पाठ के लिए आदेश हुआ। मैंने नीरज जी समेत सभी वरिष्ठ कवियों के पैर छुए और कविता पाठ प्रारम्भ किया। मैंने हास्य की छोटी-छोटी कुछ कविताएँ पढ़कर श्रोताओं पर पकड़ बना ली और फिर रामलीला वाली कविता सुनाई। काव्यपाठ के बाद मैं वापस आया तो नीरज जी ने मेरी पीठ पर हाथ रखकर आशीर्वाद देते हुए कहा कि 'बेटा, तुम मौलिक कवि हो, अपनी मौलिकता कभी मत छोड़ना।' नीरज जी के ये शब्द आज भी मंत्र की तरह मेरे कानों में गूंजते हैं। ●

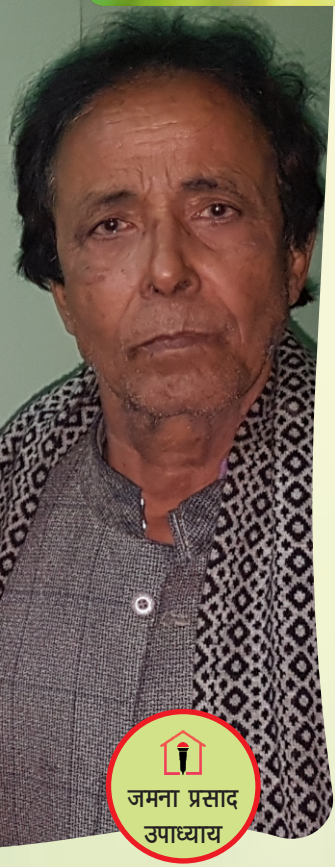

जमना प्रसाद उपाध्याय

अदम साहब की मस्ती

● जमना प्रसाद उपाध्याय

बिजनौर के कस्बा चान्दपुर से भाई अतुल भाटिया जी का फोन आया कि अमुक तारीख़ को एक कवि-सम्मेलन है, उसमें हम अदम साहब का सम्मान करना चाहते हैं। आप उनकी स्वीकृति लेकर तथा साथ लाने की गारण्टी के साथ सूचित करें। मैंने अदम जी से बात की और स्वीकृति पाकर सूचित कर दिया कि अदम जी साथ आ रहे हैं।

चण्डीगढ़ एक्सप्रेस में हम दोनों का आरक्षण हो गया। निर्धारित तिथि पर अदम जी ने घर से निकलकर मुझे सूचना दी कि मैं प्रस्थान कर चुका हूँ। मैं भी लखनऊ की बस में बैठ गया। रास्ते में मैं बार-बार उनकी लोकेशन ले रहा था। बाराबंकी पहुँचने पर उन्होंने मुझे बताया कि वे एक घण्टे में चारबाग़ पहुँच जाएंगे। मैंने चारबाग़ पहुँचकर उन्हें फोन किया तो उनका फोन स्विच्ड ऑफ। स्टेशन पर हर जगह तलाशा लेकिन कोई लाभ नहीं। परेशान होकर मैंने आयोजक को फोन किया और इस स्थिति से अवगत कराया। उन्होंने कहा कि आप ट्रेन पकड़कर यहाँ पहुँचिए, आगे हरि इच्छा।

बहरहाल, मैं सवेरे चान्दपुर पहुँच गया। स्नान वगैरह से निवृत्त होकर बैठा ही था कि किसी अन्य नम्बर से अदम साहब का फोन आया। उन्होंने कहा— "मैं रात में कहाँ था, मुझे पता नहीं। सवेरे जब

ठीक-ठाक हुआ तो मोबाइल ग़ायब। अब मैं वक़ील साहब (गाँव के वक़ील साहब, जो हाईकोर्ट में प्रैक्टिस करते हैं।) के घर पर ही हूँ और उन्हीं के फोन से बात कर रहा हूँ। क्या आदेश है?"

मैंने कार्यक्रम के आयोजक अतुल भाटिया जी से बात की तो उन्होंने कहा— "वे टैक्सी करके आ जाएँ, मैं भुगतान कर दूंगा। वे मिल गये, ये ख़ुशी की बात है।"

रात नौ बजे तक सभी कवि मंच पर आ गये। अदम भाई फोन पर लगातार यही सूचना देते रहे कि बस पहुँच रहे हैं। रात के क़रीब बारह बजे भाई रामनाथ सिंह अदम गोंडवी जी नमूदार हुए। एकदम अस्त-व्यस्त, लेकिन मस्त। मुंतज़मीन ख़ुश हुए। अदम साहब का स्वागत किया गया और ये महाशय हमारे पास आकर बैठ गये। चेहरे पर कुछ अपराध-बोध जैसा भाव दिखायी पड़ रहा था।

मैंने धीरे से पूछा— "पैसे तो थे नहीं, फिर व्यवस्था कैसे हुई?"

वे बोले— "कुछ वक़ील साहब की कृपा और कुछ टैक्सीवाले के रहमो-करम से सब हो गया।"

हिन्दी-उर्दू के कॉकटेल से मैं समझ गया कि देशी-विदेशी दोनों का मिश्रण है। बहरहाल, रात दो बजे जब अदम साहब माइक पर आये तो जो हुआ, उसे शब्दों में बयां कर पाना बहुत कठिन है। ऐसा काव्यपाठ कि सारा कवि-सम्मेलन एक तरफ़ और भाई का काव्यपाठ एक तरफ़। लगातार बारह ग़ज़लों को पढ़ते हुए मैं अदम भाई का पहली बार देख रहा था। एक-एक शेर पर गूंजती हुई तालियाँ और वाह-वाह और निस्पृह भाव से अदम जी का काव्यपाठ। सम्मान के साथ सुबह एक लिफ़ाफ़े में सम्मान राशि और दूसरे में टैक्सी का किराया अतुल भाटिया जी ने दिया, लेकिन टैक्सी का किराया लेने से अदम साहब ने मना कर दिया। बोले— "टैक्सी हमारी ग़लती की वजह से करना पड़ा, इसलिए इसका भुगतान भी मैं ही करूंगा।"

बहुत मान-मुनव्वल के बाद टैक्सी का किराया लेने को राज़ी हुए। लौटकर लखनऊ में तीन-चार दिन का जश्न रहा। जब घर वापसी का किराया ही शेष बचा तो सब भूत शान्त हुआ।

हाँ, मैंने ज़बरदस्ती लखनऊ आते ही उन्हीं के पैसों से एक नया मोबाइल ख़रीद लिया था, सो वही लाभ रहा।

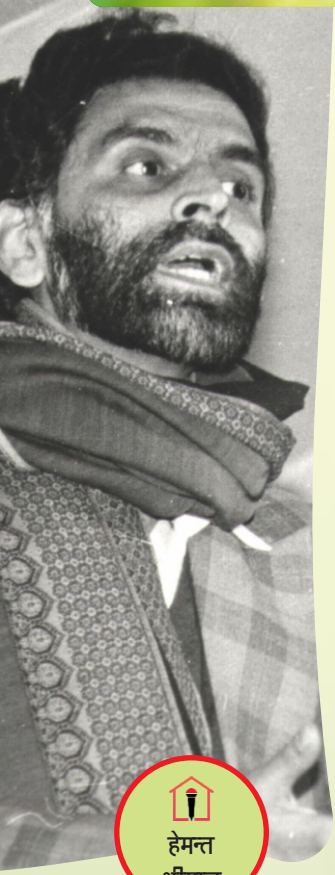

पहली बार लालक़िला

● हेमन्त श्रीमाल

1986 में मुझे पहली बार लालक़िला कवि-सम्मेलन में काव्य पाठ हेतु सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यह कवि सम्मेलन मेरे काव्य जीवन में एक विशिष्ट उपलब्धि लेकर आया, क्योंकि इस आयोजन के बाद मेरी काव्य यात्रा निरन्तर ऊँचाइयों की ओर अग्रसर होती चली गयी।

हेमन्त श्रीमाल

लोंगोवाल समझौते के तहत 'चण्डीगढ़' पंजाब को सौंप दिये जाने के फैसले के परिणामस्वरूप देश में विशेषकर दिल्ली में हिंसा की आशंका और भारी तनाव का माहौल था। फिर भी प्रतिवर्ष की तरह लगभग एक लाख श्रोतागण कवि-सम्मेलन के लिये एकत्रित हुए थे। यह उल्लेखनीय था कि इस वर्ष सुरक्षा के मद्देनजर सभी श्रोतागण मेटल डिटेक्टर से गुज़रकर लालक़िला प्रांगण में पहुँच पाये थे।

संवेदनशील स्थितियों को भाँपते हुए आयोजकगण कवि-सम्मेलन को शीघ्रातिशीघ्र सम्पन्न कर लेना चाहते थे, इसलिए आदरणीय सोम जी ने कवि-सम्मेलन का संचालन करते हुए आरम्भ में ही आमन्त्रित कविगणों को अच्छी तरह आगाह कर दिया था कि वे अपनी केवल एक-एक कविता का ही पाठ करें। मग़र बीच-बीच में कुछ कवियों

ने एक के बाद दूसरी रचना भी पढ़ी, तो उन्होंने उन सभी को बार-बार टोका और फिर से आगाह किया कि कृपया इस बात का विशेष रूप से ध्यान रहे कि कविगण अपनी केवल एक ही रचना का पाठ करें, बाद में आप दूसरे दौर में अधिक रचनाएँ सुना लीजियेगा। आयोजकों की मानसिकता यह थी कि माहौल को देखते हुए समस्त कवियों से जल्दी-जल्दी काव्य पाठ करवाकर आयोजन को शीघ्र ही निपटा लिया जाए।

सोलहवें क्रम पर मुझे माइक पर आमन्त्रित किया गया। उस समय मेरी 'चम्बल की बेटी का बयान' रचना कुछ समय पूर्व ही रची गयी एकदम ताज़ा रचना थी। निर्देशानुसार मैंने उस एक कविता का वाचन किया। इतने विशाल श्रोता समूह में मेरी यह कविता उस वक़्त धन्य हो गयी, जब तालियों की गड़गड़ाहट और श्रोताओं की दाद थमने का नाम नहीं ले रही थी। उस विहंगम दृश्य को स्मरण करके आज भी मैं रोमांचित हो उठता हूँ।

परन्तु चूँकि एक ही रचना के पाठ का निर्देश था, इसलिए मैं भरपूर करतल ध्वनि के बीच श्रोताओं को नमन कर अपनी जगह पर लौट गया। लेकिन जनसमूह कब मानने वाला था! इस क़दर घनघोर 'वन्स मोर' की बारिश हुई कि आदरणीय सोम जी को खड़े होकर श्रोताओं को शान्त करते हुए कहना पड़ा कि इतनी जनभेदिनी जब कवि को दोबारा सुनना चाहती है तो मुझे कवि हेमन्त श्रीमाल को माइक पर बुलाना ही पड़ेगा। मंच पर उपस्थित कवियों में एकमात्र मैं ही ऐसा ख़ुशनसीब कवि था, जिसे संचालकीय आदेश पर एक और रचना सुनाने का अवसर मिला। 'दौलत के अन्धों ने निर्धन की बेटी को मार दिया', दहेज प्रथा पर आधारित मेरी इस दूसरी रचना ने भी श्रोताओं की भरपूर तालियाँ बटोरी और ख़ूब समर्थन हासिल किया।

यह माता सरस्वती की मुझ पर असीम कृपा ही थी कि देश के लब्धप्रतिष्ठ 25-30 वरिष्ठ कविगणों की उपस्थिति में तथा एक लाख श्रोताओं से खचाखच भरे लालक़िला प्रांगण में आयोजित इस कवि-सम्मेलन में मुझ जैसे उभरते हुए कवि को प्रमुखता से अपनी स्थिति दर्ज कराने का अवसर प्राप्त हुआ। आज भी मैं और मेरे परिजन इस कवि-सम्मेलन की वीडियो रेकार्डिंग देख-सुनकर आनन्दित होते रहते हैं। ●

गुरु सक्सेना

शेर के गले में घण्टी

● गुरु सक्सेना

अस्सी-नब्बे के दशक में एक कवि-सम्मेलन तिवनी (रीवा) विधानसभा अध्यक्ष श्रीनिवास तिवारी जी के गाँव में उन्हीं के सौजन्य से हुआ। दोपहर तक सभी कवि पहुँच गये, जिनमें हुल्लड़ मुरादाबादी, सत्यनारायण सत्तन, इन्दिरा इन्दु, शिवकुमार अर्चन, मैं और भी अनेक कवि। सब कुछ ठीक-ठाक था और प्रतीक्षा शाम होने की थी। तभी क़रीब पाँच बजे ज़ोरदार आंधी चली। पूरा पांडाल धराशायी हो गया। मैदान भर में ट्यूबलाइट के टुकड़े बिछ गये। सब ओर काँच ही काँच बिखर गया। इतने बड़े तामझाम को समेटना कठिन हो गया। वातावरण बिगड़ गया। कार्यक्रम कल करने की उड़ती हुई ख़बर कवियों तक पहुँची।

अधिकांश कवि कह रहे थे कि मैं नहीं रुक सकता, मुझे तो कल अमुक स्थान पर जाना है। एक कवि बोला, 'मुझे भी जाना है। तो आज ही करवा लो। जाओ, बांधो बिल्ली के गले में घंटी, तभी संकट दूर होगा।'

यहाँ बिल्ली क्या, सीधा शेर का मामला था। तिवारी जी को विन्ध्य क्षेत्र का सफेद शेर बोलते थे। कोई कवि आयोजन समिति से बात करने तैयार न हुआ। अन्त में मैं और शिवकुमार अर्चन पंडित जी के

पास गये। प्रणाम सहित सारी स्थिति बताते हुए प्रस्ताव रखा कि 'कवियों को सुनाने लायक तखत डाल दिए जायें, जनता को सामने बैठने की व्यवस्था हो जाय, बिना किसी सजावट पांडाल के भी बढ़िया कार्यक्रम हो सकता है। आंधी न आपने चलायी, न कवियों ने। अब जैसी स्थिति है उसी में आनन्द आना चाहिए।'

पंडित जी कविता प्रेमी थे, पहले भी हम दोनों अनेक बार उन्हें कविता सुना चुके थे। अत: हमें चाहते भी थे, सुनकर बोले– 'ऐसे में भी हो सकता है कवि-सम्मेलन।'

हमने कहा– 'उससे भी बढ़िया होगा, आप चिन्ता न करें।'

'अच्छा तब ठीक है कर लो, बोल देता हूँ।'

तिवारी जी कवियों को बहुत प्रेम करते थे। पूरा कार्यक्रम सुनते थे और सराहना सहित आशीर्वाद देते थे। बहुत बढ़िया कार्यक्रम हुआ सवेरे के पाँच बजे तक आनन्द की वर्षा हुई। ●

सुधियाँ

सरिता शर्मा

झाड़ पोंछ अल्बम को
खोल गयी शाम
रात हुई सुधियों के नाम

उलझी है जंगली लताओं-सी
बीते सन्दर्भों की अलकें
बेमौसम भर गयी घटाओं-सी
बरसों से सूखी थी पलकें
पीड़ा की जलपरियाँ
नाचीं अविराम
रात हुई सुधियों के नाम

हमारा प्रथम अमरीका गमन

● प्रो. अशोक चक्रधर

पहली कड़ी

अशोक चक्रधर

डॉ. कुँअर बेचैन रह-रहकर याद आ रहे हैं। जब तक वे इस धरती पर चलते-फिरते थे, तब तक हम प्रायः मिलते-जुलते ही रहते थे। यादों में उनको इतना बनाये रखने की कभी कोशिश नहीं की। वे भी जाने कहाँ-कहाँ तन-मन से सकर्मक घूम रहे होते थे। अपुन भी लगे ही रहते थे किसी न किसी काम-शगल में। मिल गये तो बतियाए और बतियाए तो ऐसे बतियाए कि अपने-अपने सारे कच्चे चिट्ठे एक-दूसरे के सामने बेहिचक खोल दिये। अब, जब वे नहीं हैं, तो ऐसी-ऐसी यादें घुमड़ रही हैं, जो दिमाग़ की हार्डड्राइव के किसी गुप्त-सैक्टर में सुप्त पड़ी थीं। कोई याद किसी फ़ोटो से, कोई किसी पर्ची से, कोई किसी यात्रा-ब्यौरे से, कोई किसी मारक टिप्पणी से, कोई-कोई तो हस्त-लिखित डायरी से निकल कर बाहर आ रही है। स्मृतियाँ आपस में बहुत ही संश्लिष्ट तरीके से अन्तर्ग्रथित रहती हैं। कहीं की रस्सी, कहीं का घोड़ा, स्मृतियों ने कुनबा जोड़ा।

एक स्मृति कैसे आयी, पहले मैं आपको ये बताता हूँ। डॉ. कुँअर बेचैन ने प्रारम्भ में अपनी पुस्तकें पुत्र के नाम पर रखे गये 'प्रगीत प्रकाशन' से स्वयं ही प्रकाशित की थीं। पतली-पतली होती थीं, छाप लेते थे। संग्रह-भण्डारण में विशेष दिक़्क़त नहीं आती थी। लेकिन, जब भण्डारण के साथ-साथ विक्रय-वितरण की समस्या भी आने लगी, तो नयी पुस्तकें अपने मित्र प्रकाशकों को देने लगे। जैसे, अयन प्रकाशन, अनुभव प्रकाशन, अमृत-मन्दिर प्रकाशन और हिन्दी साहित्य निकेतन आदि। उनकी जो लगभग अन्तिम महत्त्वपूर्ण कृति रही, वह थी 'प्रतीक पांचाली'। एक वृहद् महाकाव्य के रूप में। अन्तिम तो नहीं कहेंगे, क्योंकि उसके बाद 'माहिया' छन्द में उन्होंने

एक पुस्तक 'कह लो जो कहना है' की पाण्डुलिपि भी बना दी थी, जो उनके परलोक गमन के बाद अयन प्रकाशन से आयी है। अभी उनकी और भी बहुत सारी सामग्री है, जो छपने के लिए बेक़रार हो सकती है। बहरहाल, 'प्रतीक पांचाली' जिन्होंने प्रकाशित की, वे हैं असीम प्रकाशन के स्वामी, उनके प्रिय शिष्य-कवि अनिल असीम। तब मुझे याद आया कि अनिल असीम डॉ. कुँअर बेचैन के साथ पहली बार हमारे घर तब आये थे, जब मैं और डॉ. कुँअर अमरीका जाने वाले थे। तब अनिल असीम, अनिल गुप्ता कहलाते थे।

बस इस एक याद के आने से अनेकानेक यादें घुमड़ने लगीं, तेईस और चौबीस फरवरी उन्नीस सौ तिरानबे की। तीन दशक से ज़्यादा पुराने दृश्य आकार लेने लगे। अमरीकी यात्रा के पूर्वरंग की रील सीन-दर-सीन चलने लगी।

पुस्तकें और कैसेट्स ज़रूर लेकर आइए

अमरीका जाने को लेकर हम लोग बड़े उत्साहित थे। वैसे हमारी संयुक्त विदेश-यात्राएँ पहले भी हो चुकी थीं। जैसे नेपाल, सिंगापुर, बैंकॉक और इण्डोनेशिया। इन देशों से भी पहले हम लोग अलग-अलग मॉरीशस और सोवियत संघ भी जा चुके थे। अमरीका जाने के दो अवसर पहले भी आये थे, पहला सन् उन्नीस सौ चौरासी में और दूसरा सन् उन्नीस सौ सतासी में। उनके बारे में बाद में बताऊंगा, लेकिन सन् उन्नीस सौ तिरानबे में यह पहला सुयोग था कि हम सचमुच अमरीका जा रहे थे।

अमरीका की संस्था 'अंतरराष्ट्रीय हिन्दी समिति' के महासचिव नन्दलाल सिंह जी ने फोन पर बताया था, 'पहली बार यूएसए आ रहे हैं, आप दोनों अपनी पुस्तकें और कैसेट्स ज़रूर लेकर आइएगा, यहाँ लोग हाथोंहाथ लेंगे। इससे उनमें हिन्दी पढ़ने और सुनने की दिलचस्पी बढ़ेगी। उनके अन्दर का भारत-प्रेम सशक्त होगा।'

प्रस्ताव अच्छा और आकर्षक लगा। कैसेट्स हमारे पास थे तो सही, पर ऐसे थे, जो विभिन्न कवि-सम्मेलनों में साउंड वालों ने बिना पूछे रिकॉर्ड करके बेच लिये थे, लेकिन एक प्रति सौजन्य के नाते हमारे आग्रह करने पर हमें भी भेज दी थी। इस तरह के पायरेटैड कैसेट्स तो अनेक थे, पर वे सोलो नहीं थे। पूरे-पूरे कवि सम्मेलनों के थे।

'अमरनाद' कंपनी ने मेरा एक व्यावसायिक कैसेट बनाया था, जिसकी मात्र पाँच प्रतियाँ भेजी थीं। उनका अतापता भी मेरे पास न था, न है। तो इस बार अपने प्रमोशन के लिए हमें अपने कैसेट ख़ुद ही बनाने थे, सो हम दोनों ने दरियागंज के कल्याणी साउंड स्टूडियो में रिकॉर्ड कराये। मैंने इस स्टूडियो में पहले भी अपने वृत्तचित्रों और टेलिफ़िल्मों के संगीत पर्याप्त तैयारी के साथ रिकॉर्ड कराये थे। श्रोताओं के तौर पर अपने अग्रज-अनुज कवि-मित्रों को बुला लिया, जैसे सर्वश्री ओमप्रकाश आदित्य, अरुण जैमिनी, महेन्द्र अजनबी और वेदप्रकाश। श्रोताओं के तौर पर संतोष भाभी आयीं तो हमारी बागेश्री भी गयीं। कुछ कविताप्रेमी मित्र इकट्ठा किये, जितने कि स्टूडियो में आ सकते थे।

पढ़ाते हैं तो पढ़े-लिखे भी होंगे ही

पहले मेरी कविताओं की रिकॉर्डिंग हुई। प्रारम्भिक प्रस्तावना रखी आदित्य जी ने— "मुझे संस्कृत का एक श्लोक याद आता है, 'नरत्वं दुर्लभं लोके, सुविद्या तत्र दुर्लभा, कविता तत्र दुर्लभं च कीर्ति तु अति दुर्लभा।' मनुष्य का जन्म पाना संसार में बहुत दुर्लभ है। कहते हैं कि चौरासी लाख योनियाँ भोगने के बाद मनुष्य का जन्म मिलता है। वह अशोक चक्रधर ने बख़ूबी प्राप्त किया, मनुष्य के रूप में वे हमारे सामने हैं। ज़रूरी नहीं है कि हर आदमी मनुष्य का जन्म पाकर उच्च शिक्षा भी प्राप्त कर ले। सब जानते हैं कि वह जामिआ मिल्लिया इस्लामिया विश्वविद्यालय में ऊँचे पद पर हैं, पढ़ाते हैं। पढ़ाते हैं तो पढ़े-लिखे भी होंगे ही। इसलिए उन्होंने विधाता का यह दूसरा वरदान भी प्राप्त किया। लेकिन उसके बाद कवित्व! कविता तत्र दुलर्भम्। ज़रूरी नहीं कि हर पढ़ा-लिखा आदमी कवि बन जाये। आप जानते हैं, कविता ईश्वर-प्रदत्त प्रतिभा है। भगवान किसी-किसी को यह वरदान देता है। कविता की प्रतिभा, अशोक चक्रधर में हमने देखी, ईश्वर ने उनको दी। कवि के रूप में सब उनको जानते हैं। ये सारी बातें भी मिल जायें, तो भी अन्तिम एक कठिनाई है, जो इस श्लोक में है, कि कीर्ति तु अति दुर्लभा। सारी बातें भी मिल जायें तो यश, कीर्ति, नाम, ख्याति, प्रसिद्धि ऐसी वस्तु है, जो संसार में आसानी से नहीं मिलती। कला के क्षेत्र में, राजनीति के क्षेत्र में, सामाजिक क्षेत्र में आदमी बहुत मुश्किल से प्रसिद्ध हो

पाता है, विशेषकर अच्छे कार्यों में। वह कीर्ति अशोक चक्रधर ने कम उम्र में बहुत अधिक मात्रा में, केवल अपने भारत देश में ही नहीं, लेकिन विदेशों में भी पायी। और जिन देशों में वह अभी तक नहीं गये हैं, वहाँ भी उनकी ख्याति, उनकी कीर्ति, उनका नाम बहुत पहले से पहुँच चुका है।"

श्रोताओं ने ज़ोरदार तालियाँ बजायीं। इतनी ज़ोरदार कि कंट्रोल-रूम से रिकॉर्डिस्ट महोदय बाहर निकल आये, 'रुकिए, रुकिए! माइक फट जायेगा'। कविताप्रेमी सहम गये। महोदय ने श्रोताओं वाला माइक थोड़ा ऊँचा लटकाया और अन्दर जाकर कमांड दी, 'अब बजाइए तालियाँ'! मैं भी कंट्रोल-रूम में पहुँच गया।

'आप क्यों आ गये? आपका माइक तो मैंने सैट कर दिया था।' मैंने कहा, 'डियर सर! पहले तरह-तरह की तालियाँ रिकॉर्ड कर लेते हैं। एडिटिंग में काम आएंगी।' दस मिनिट तक ताली-वादन रिकॉर्ड किया गया।

कविता-प्रेमी तालियाँ बजाते-बजाते निराश होने लगे थे। कुछ ने चाय की फ़रमाइश कर दी। मैं कंट्रोल रूम से निकलकर स्टूडियो में आया, 'अभी चाय नहीं, भोजन की व्यवस्था की गयी है। बस, एक कवि की रिकॉर्डिंग हो जाय'।

मैं लपककर माइक के पास आया और जम गया। नाइंटीन सिक्स्टी सेवन का आकाशवाणी का ऑडीशंड आर्टिस्ट था। थोड़ी तैयारी के साथ आया था। मेरी कविता सूची माइक के नीचे दबी हुई थी। माइक से निकटता और दूरी का सिद्धान्त जानता था। एक घंटे तक बिना रुके काव्य-पाठ करता रहा। स्वत:स्फूर्त तालियाँ बजती रहीं। सिंगल टेक ओके हो जाता, पर एक बार स्पूल-टेप बदलने के लिये रुकना पड़ा। मेरी दो-तीन कविताएँ रह गयी थीं।

छोटा-सा स्टूडियो भोजन की महक से भर चुका था। मैंने ब्रेक की घोषणा कर दी। आगे की गाथा एक ब्रेक के बाद।●

नोट : 'कवितैव कुटुम्बकम्' एक नियमित स्तम्भ है, जिसमें डॉ. अशोक चक्रधर की काव्ययात्राओं के अनुभवों का रोचक वर्णन पढ़ने को मिलेगा।

सुरेश अवस्थी

बेतवा पार कवि सम्मेलन

● सुरेश अवस्थी

लगभग तीन दशक पहले उत्तर प्रदेश के एक कस्बे की कवि सम्मेलनीय यात्रा मैं कभी नहीं भूल पाता। 1991-92 के आसपास झाँसी (गुरसराय) के व्यंग्य कवि श्री सुरेश वरदिया 'चन्द्रेश' जी ने हमारे शहर के कविवर श्री राम भजन त्रिपाठी 'सारंग' के साथ मुझे भी अपने गाँव, 'खैर' में आमन्त्रित किया। उन दिनों मण्डल कमीशन के विरुद्ध देश भर में आरक्षण विरोधी आन्दोलन हुआ था। कवियों ने भी आरक्षण के विरोध में तीखी-तीखी कविताएँ लिखी थीं। मुक्तक सम्राट कहे जाने वाले सारंग जी की 'आरक्षण बावनी' के बावन मुक्तक और मेरी एक मारक व्यंग्य रचना चर्चा में थी। 'खैर' पहुँचने का रास्ता थोड़ा दुर्गम था। कानपुर से पूँछ तक बस से और पूँछ के पास बेतवा नदी नाव से पार करके, नदी के उस पार मिलने वाली बस में 'खैर' पहुँचा जाता था।

मैं कवि-सम्मेलनों में नया आया था, सो मेरे लिए हर मंच महत्त्वपूर्ण था। मेरा साथ मिला तो सारंग जी भी तैयार हो गये और हम लोग झाँसी जाने वाली बस पर सवार हो निकल पड़े। बस से पूँछ उतरकर पता किया कि नदी पर नाव कहाँ मिलती है। पता चला कि थोड़ा दूर

है लेकिन कोई वाहन नहीं मिलेगा। पैदल जाना होगा। अन्तिम नाव शाम पाँच बजे निकल जाती है। घड़ी देखी, पाँच बजने में केवल चौबीस मिनिट शेष थे। मैं एक कंधे पर अपना और दूसरे पर सारंग जी का थैला लटकाये चल पड़ा। नदी की ओर जाने वाले मार्ग पर पहुँचे, तो एक टैम्पोनुमा वाहन उधर जाते दिखा। पीछे ट्रॉली में लोहे के गर्डर लदे थे। मैंने ड्राइवर से बात की तो वह नदी के थोड़ा पास तक ले जाने को तैयार हो गया। ड्राइवर के एक साइड मैं व दूसरी तरफ सारंग जी लगभग आधे-आधे लटक कर बैठ गये। उसने नदी के क़ाफ़ी नज़दीक पहुँचा दिया। लपककर नदी के किनारे पहुंचे तो सन्न रह गये। अन्तिम नाव जा चुकी थी।

हम दोनों नदी के किनारे ठगे से खड़े हुए, कभी मुँह चिढ़ा रही नदी की लहरों को देख रहे थे और कभी अस्ताचल की ओर जा रहे सूरज को। अब लौट के बुद्धू घर को आये कहावत को चरितार्थ करने के सिवा कोई रास्ता नहीं था।

सारंग जी ने नदी किनारे बैठकर मुँह धोया और बोले, "ये कवि-सम्मेलन हमारे लिए बड़ी चुनौती बन गया। अब वापस ही चलना होगा। आयोजक शायद ही हमारी इस भागदौड़ पर विश्वास करें। हमारी छवि तो ख़राब होगी ही, कवि-सम्मेलन पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। दूर-दूर तक कोई दिख भी नहीं रहा था, जो कोई और रास्ता खोजा जा सके। अब यू-टर्न के सिवाय किया भी क्या जा सकता है?"

हम लोग वापस होने की बात कर ही रहे थे कि पीछे से एक भीमकाय साधु आता दिखा। गेरुए वस्त्र, लम्बी दाढ़ी, सिर से लटकती लटें, कंधे पर थैला, हाथ में बड़ा-सा चिमटा। कुल मिलाकर आकर्षक कम, डरावना स्वरूप अधिक।

पास आकर साधु बोला, 'हर हर महादेव। नाव चली गयी?'

हमने उन्हें औपचारिक प्रणाम किया। और 'हाँ' में जवाब दिया। साधु ने चिमटा बजाया और बोला, 'कोई बात नहीं।'

फिर उसने अपनी तहमतनुमा धोती को ऊपर खोंसा और नदी के जल में पहला क़दम रखते हुए बोला, 'पार जाना है, तो आओ मेरे साथ। डरो नहीं नदी बहुत गहरी नहीं है। मुझे सुरक्षित रास्ता पता है। मैं अक्सर जाता हूँ।'

मैंने सारंग जी की ओर देखा और धीरे से पूछा, 'दादा, इसने चिमटा मारकर लूट लिया तो ?'

उन्होंने पूरे आत्मविश्वास के साथ जवाब दिया, 'चिन्ता मत करो, हम दो हैं, वह अकेला।' और इसी के साथ उन्होंने अपनी धोती उतार कर कंधे पर डाल ली। मैं भी अपनी चौड़ी मोहरी वाला पैंट को जितना चढ़ सकता था, ऊपर चढ़ाया और दोनों थैले सिर पर रखकर साधु के पीछे चल पड़ा। चिन्ता, तनाव, आशंका व भय के साथ किसी तरह नदी पार हुई तो चैन की साँस आयी।

हमने साधु को प्रणाम करके आभार प्रकट किया और देखा कि थोड़ी दूर एक बस स्टार्ट खड़ी थी। उसका कण्डक्टर दरवाज़े के हत्थे से लटका हुआ पीछे की ओर देख रहा था। बस रेंगने लगी थी। मैंने हाथ उठाकर इशारा किया तो कण्डक्टर ने रुकने का संकेत दे दिया। सारंग जी ने धोती को जल्दी से तहमत की तरह लपेटा और हम लपककर बस पर चढ़ गये। लगभग आधा घण्टे में हम गन्तव्य तक पहुँचे।

कार्यक्रम 'खैर' इंटर कॉलेज के मैदान में था। उल्लास और ऊर्जा से भरे श्रोता समूह ने उत्साह के साथ सभी को सुना। आयोजकों व अन्य कवियों को जब हमारे यात्रा संकट की जानकारी मिली तो अधिकांश ने संवेदना प्रकट की। मुझे याद है, वाराणसी के कवि पंडित श्रीकृष्ण तिवारी जी ने मंच से भी इसका ज़िक्र करते हुए कहा कि कविता कठिनाइयों से जूझने की शक्ति प्रदान करती है, इन कविद्वय का अवरोधों से लड़ते हुए यहाँ तक पहुँचना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

वापसी में मैंने सारंग जी पूछा, 'अगर हम लोग वापस चले जाते तो ?' उन्होंने बड़ी संयत भाषा में समझाया, 'कवि-सम्मेलन एक संस्था है, जिसके प्रति तो हमारी प्रतिबद्धता होती ही है; कड़ी मेहनत से मंच सजानेवाले आयोजकों व सैकड़ों श्रोताओं के साथ ही हमारे भीतर के कवि के प्रति भी हमारी ज़िम्मेदारी होती है। इस ज़िम्मेदारी की परीक्षा से हमें तब तक पीछे नहीं हटना चाहिए, जब तक हम पूरी तरह से विवश न हो जाएँ।'

मुझे उनकी ये सीख हमेशा याद रहती है। हम लोगों ने उस दिन अपने व्यक्तित्व के शीशे पर चमक लाने के लिए जूझने के 'पारे' की पॉलिश न की होती, तो चमक का धुंधला जाना तय था। ●

हिन्दी का देश मॉरीशस

● ध्रुवेन्द्र भदौरिया

विश्व हिन्दी सम्मेलन में मॉरीशस की धरती को नमन करने का स्वर्णिम अवसर भारत सरकार के आमन्त्रण के द्वारा मुझे मिला तो मैं रोमांच से भर गया था। बहुत उत्सुकता थी उस धरती पर जाकर भारतीय भाषा और संस्कृति के विविध रंगों से परिचय प्राप्त करने की। हम जब मॉरीशस के पोर्टलुइस हवाई अड्डे पर उतरे तो हमारी अगवानी में अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्ध परिषद की सुश्री तुलसी जी और सुश्री वन्दना जी गाड़ी सहित उपस्थित थीं। औपचारिकता के बाद हम लोग होटल हिल्टन के लिये चले तो मार्ग में गन्ने के खेत मिले। लगा, जैसे भारत के ही किसी गाँव से हम लोग गुज़र रहे हैं, बस अन्तर था, तो यह था कि सड़क चिकनी और बिना गड्ढे वाली थी, गन्दगी तो दूर-दूर तक नहीं थी। भारत के कश्मीर जैसे सुन्दर दृश्य भी दिखाई दे जाते थे। हमको बताया गया कि अंग्रेज कोलकाता मद्रास और बम्बई से भारतीयों को मजदूरी के लिये यहाँ लाये थे। ये मजदूर बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के मूल निवासी थे। यह सब यहाँ एग्रीमेंट (एग्रीमेंट को यह गरिमिट बोलते थे) पर लाए गये थे, अतः गिरिमिटिया कहलाये। जब ये लोग यहाँ आये तो अपने साथ

रामचरितमानस और हनुमान चालीसा के साथ भारत के लोकगीत और वहाँ की संस्कृति भी लाये और उसे उन्होंने बहुत सलीके से सहेजा। अंग्रेज अधिकारी इन प्रवासी मजदूरों पर बहुत अत्याचार करते थे, इनको सीसा लगे कोड़ो से पीटा जाता। शाम को जब ये लोग छिपकर पत्थरों के टीले की आड़ में हिन्दी की वर्णमाला बच्चों को सिखाते, उनको रामायण और महाभारत की कहानियाँ सुनाते तो इनको यातनाएँ दी जातीं। अंग्रेजों के भय से वे गन्ने के खेतों में छिप जाते, लेकिन अगली शाम फिर इकट्ठे हो जाते और बच्चों को राम कृष्ण की कहानी सुनाते। अपनी भाषा की वर्णमाला सिखाते 'रामा सुमति देहु -क ख ग घ अंगा'।

अमानवीय अत्याचार सहकर भी ये लोग अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपने देवी-देवताओं को भूले नहीं। इन्होंने अपनी आस्था के बल पर तालाब में गंगा को प्रकट कर लिया और गंगा तालाब का निर्माण किया। इन्होंने अपने परिश्रम से विश्व के नक्शे पर बिन्दु के समान छोटे से 39 मील लंबे और 29 मील चौड़े नन्हे से टापू को स्वर्ग के समान सुन्दर बनाया। कहीं मन्दिर, कहीं कथा मण्डप और उनके परिसर में कहीं धानी, कहीं अंगूरी, कहीं फ़िरोज़ी सौन्दर्य से सुसज्जित रंग छटाएँ। चारों ओर गहरा नीला फेन उगलता चट्टानों से टकराता हाहाकार करता महासागर और उनके सुन्दर तट। सब इनके श्रम बिन्दु से स्नात हुए! मोहित करनेवाले झरने और उनके उद्यान सब भारतीयों के ख़ून-पसीने के जीवन्त स्मारक बने। इन्होंने बहुत कष्ट उठाकर अपनी भाषा, अपनी संस्कृति को बचाया। परिणामस्वरूप अब यहाँ हिन्दी भाषा और संस्कृति बहुत गहरी जड़ें जमा चुकी है, हिन्दी भाषी जनसंख्या बहुमत में है। डच और अंग्रेजी बोलनेवाले भी हिन्दी को मान देते हैं।

यह यूँ ही नहीं है कि मॉरीशस में भारतीय मूल के लोग ही पीढ़ियों से सत्ता संभाल रहे हैं। यह भी संयोगवश नहीं है कि विश्व हिन्दी सम्मेलन में मॉरीशस के प्रधानमन्त्री श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ बार-बार अपने देश को पुत्र और भारत को पिता का सम्बोधन देकर सम्मानित करते हैं।

मॉरीशस में भारत सरकार के सहयोग से हिन्दी सचिवालय स्थापित है, जो हिन्दी को वैश्विक स्तर पर प्रचारित-प्रसारित करता है। हिन्दी

संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बने —इसके लिये भी सशक्त प्रयास किये जा रहे हैं। भारत के विदेश विभाग की अंतरराष्ट्रीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् की ओर से यहाँ लगने वाली संस्कृत की कक्षाओं में विद्यार्थियों की संख्या निरंतर बढ़ रही है।

यहाँ पर ही आचार्या प्रतिष्ठा जी योग भी सिखाती हैं। इन्दिरा गान्धी सांस्कृतिक केन्द्र में संगीत और शास्त्रीय नृत्य भी सिखाया जाता है।

भाषा संस्कृति की संवाहक होती है। ग्यारहवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन इसी विचार पर केन्द्रित रहा। भाषा के उन्नयन के लिये अनेक योजनाओं का उद्घोष हुआ है। देखना यह है कि क्रियान्वयन कितना होता है। किन्तु यह तो तय है हिन्दी का विकास रथ अब रुकने वाला नहीं है।

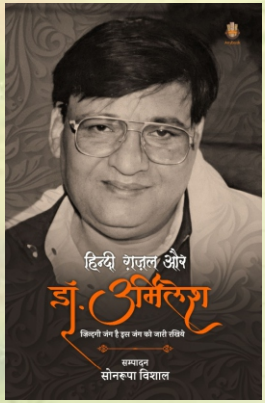

पुस्तक परिचय

हिन्दी ग़ज़ल और डॉ. उर्मिलेश

हिन्दी ग़ज़ल की यात्रा, परम्परा और विकास का अध्ययन, डॉ. उर्मिलेश को पढ़े बिना पूरा नहीं हो सकता। न केवल उनकी ग़ज़लियात, बल्कि उनका चिन्तनशील गद्य साहित्य भी हिन्दी ग़ज़ल के प्रति उनके दृष्टिकोण को समझने क लिए अत्यंत आवश्यक है। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए डॉ. उर्मिलेश द्वारा ग़ज़ल के लिए किये गये अथक परिश्रम तथा समर्पण को एक जिल्द में बान्धकर 'हिन्दी ग़ज़ल और डॉ. उर्मिलेश' के रूप में सम्पन्न किया है डॉ. सोनरूपा विशाल ने। इस वृहत् ग्रंथ के प्रेरक तथा सम्पादकीय मार्गदर्शक वरिष्ठ ग़ज़लकार श्री हरेराम समीप हैं। लगभग 375 पृष्ठ के इस ग्रंथ में डॉ. उर्मिलेश के हिन्दी ग़ज़ल पर शोधपरक आलेख एवम् उनके आत्मकथ्य सहित कई ग़ज़लें व अशआर शामिल हैं। इसके साथ ही उनके रचनाकर्म पर पुरानी और नयी पीढ़ी की टिप्पणियाँ भी पुस्तक का अंग हैं। एनी बुक से प्रकाशित इस संकलन का मूल्य चार सौ रुपये है।

काश दुनिया ऐसी होती

● रमेश शर्मा

रमेश शर्मा

बहुत पहले ,एक बार जब मैंने कवि-सम्मेलनों में नया-नया ही जाना शुरू किया था; कहीं से लौटते हुए ट्रेन बदलकर रतलाम से चित्तौड़गढ़ के लिये दूसरी ट्रेन में सवार हुआ! रात ग्यारह बजे वो ट्रेन रतलाम से चली!

स्लीपर कोच में रिज़र्वेशन था! ट्रेन चली, यात्री व्यवस्थित हुए ही थे कि एक छोटे शिशु की रोने की आवाज़ किसी बर्थ से आने लगी! (सामान्यतया जैसा सोचते हैं कि माँ उसे चुप करा लेगी) सब शायद इस प्रतीक्षा में थे कि बच्चा चुप हो जाएगा, पर बच्चा बढ़ते-बढ़ते बहुत ही बुरी तरह रोने लगा! महीने दो महीने के उस बच्चे का पिता; जो लड़का-सा ही था; उसे गोद में उठाये पूरे कोच में घूमने लगा। पर बच्चा और ज़ोर-ज़ोर से बिलखने लगा! वो नये-नये माता-पिता थे, पत्नी को शायद बच्चे के जन्म के महीने-दो महीने बाद पीहर से लौटाकर ससुराल ला रहा था! युगल की उम्र को देखने से लग रहा था कि उनका पहला बच्चा था!

परेशान लड़का उतरा मुँह लिए 'धम्म' से पत्नी के पास आकर बैठ गया और बच्चा उसकी गोद में दे दिया! तब तक कोच में सभी का ध्यान भी इसी तरफ़ लगा रहा!

बच्चे के लगातार बेतरह रोने से घबराकर वो लड़की भी रोने लगी और लड़का भी ऐसा लग रहा था कि बस अभी रो पड़ेगा।

तभी एक वृद्ध पंजाबी महिला ने उस लड़की को बाँहों में समेट लिया तो लड़की फूट-फूट कर रोने लगी! वृद्धा ने बच्चे को गोद में लिया और झुलाती हुई पूछने लगी, 'दूध लिया ना?...कहीं पेट में दर्द तो नहीं इसके?' और छोटे बच्चों के इस तरह लगातार रोने से सम्बंधित अनुमान प्रकट करती रही।

कोच से एक-एक करके कई स्त्री-पुरुष उस युगल के इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गये। कोई लड़के को हिम्मत बंधा रहा था, तो कोई लड़की को चुप कर रहा था। एक बुज़ुर्ग मुस्लिम पुरुष ने एक लंबे से शॉल को झुलेनुमा बनाकर बच्चे को झुलाना शुरू किया और बहलाने के मौखिक प्रयास सहित इधर-उधर घुमाने लगा। फिर भी बच्चे का स्वर मंद पड़ा, पर रोना बन्द न हुआ। फिर उस बुज़ुर्ग की पत्नी ने बच्चे को अपनी गोद में लिया और घुटने उछाल-उछालकर गोद का झूला देते हुए बच्चे को चुप कराने का प्रयास किया। पास बैठी एक अन्य महिला ने कुछ 'हँसली' डिगने का अनुमान प्रकट करते हुए बच्चे को अपनी गोद में ले लिया और अपने अनुमान से पेट पर, शरीर पर शायद कुछ मालिश या कुछ ऐसा किया कि बच्चा धीरे-धीरे चुप हो गया। फिर धीरे से बहुत ही नाज़ुक तरीक़े से बच्चा उसकी माँ की गोद में दे दिया, जहाँ वो नींद की अवस्था में आने लगा था।

उस दिन जिस तरह सभी लोग उस नवयुगल के संरक्षक बन गये, वह दृश्य क़माल था। कोई भाई-सा, कोई माँ-सी, कोई बड़ी बहन-सी...! मानो सृष्टि के केन्द्र में वह बच्चा था और सभी उसके पालक थे।

इस घटना को बरसों बीत गये। सोचता हूँ तो मन भर आता है, कि क्या अद्‌भुत देख चुका हूँ मैं! काश पूरी दुनिया ऐसी ही होती! ●

लाइव लतीफ़ा

● अरुण जैमिनी

कानपुर के हरकोट बटलर टेक्निकल यूनिवर्सिटी में वहीं का विद्यार्थी प्रेम कविता पढ़ रहा था। पंक्ति थी – 'मेरे पास से गुज़रो तो कह दिया करो...'

सामने से श्रोता बोले– '...भैया, भैया, भैया!' ●

डर, अंधेरा और हादसा

रासबिहारी गौड़

● रासबिहारी गौड़

शाहदरा-दिल्ली में कार्यक्रम करने के बाद मुझ सहित श्री राजेन्द्र राजन, विनीत चौहान और मंजू दीक्षित को अगले दिन किशनगढ़ पहुँचना था। कवि-सम्मेलन सम्पन्न होने पर हम चारों लगभग रात ढाई-तीन बजे एक ऑटो से पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन के लिए रवाना हुए। हमें नहीं पता कि ऑटो चालक नशे में था या नीन्द में; वह तेज़ रफ़्तार से ख़ाली सड़क पर ऑटो दौड़ा रहा था। हम चारों आधी-जगी नीन्द में ऑटो की रफ़्तार का मज़ा ले रहे थे कि अचानक कश्मीरी गेट के पास एक मोड़ पर दनदनाता ट्रक नमूदार हुआ। उसके पिछले हिस्से से ऑटो का फ्रंटसाइड ज़ोरदार झटके से टकराया। अप्रत्याशित पल को समेटे हमारी चीख़ें ख़ुद-ब-ख़ुद गले से बाहर बरस पड़ीं। चीख़ों से लिपटकर हमारा सामान भी सड़क पर बिखर गया।

क्षणांश के लिए हम चारों एक-दूसरे की उपस्थित भूल गये और अंधेरे में मौत के काले चेहरे को देखकर अपना-अपना बचना सुनिश्चित करने लगे।

लगभग आधा किलोमीटर दूर जाकर ट्रक रुका। आवाज़ों को ख़ाली कर हम चुप्पा खोल में चले गये और ऑटो से कूदकर सबसे पहले

सड़क पर बिखरा अपना-अपना सामान बटोरने लगे। ट्रक और ऑटो ड्राइवर किसी बहस में उलझ चुके थे। मौत के पल को झाड़कर वे अपने-आपको सही सिद्ध करने में व्यस्त हो गये।

हम चारों समूचे मंज़र को वहीं छोड़कर, फूली हुई साँसे और जमा हुआ डर समेटे, बिना पीछे देखे, अंधेरे को चीरते हुए पैदल ही स्टेशन की ओर चल दिये। मानो, थोड़ी देर भी रुके तो मौत का चेहरा फिर से सामने आकर खड़ा हो जाएगा। देर तक हमारी रेंगती आवाज़ बिना अर्थ के बोलती रही। जल्दी ही हम अपनी आरक्षित ख़ामोशी के बीच जा बैठे; अभी-अभी गुज़रे मंज़र को भूलने के लिए ...बचने के लिए!

पलों के पहाड़ पार करते हुए जब हम बहुत सामान्य स्थिति मे पहुँचे तब चेहरों के रंग बदले हुए थे। आँखों की नीन्द उड़ी हुई थी। आवाज़ों से डर रिस रहा था। दुआओं के लिए मन मचल रहा था। आज भी वह सब याद करते हुए रात का अंधेरा डराने लगता है।

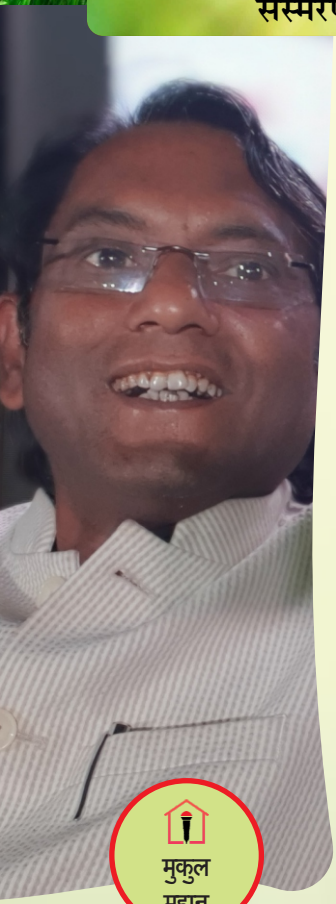

मुकुल महान

न होने वाला कवि सम्मेलन

● मुकुल महान

नब्बे के दशक का आरंभ था। शहर-ए-लखनऊ में अदब और साहित्य की नयी पौध उभर रही थी और दौड़-दौड़कर कवि-गोष्ठियाँ व साहित्यिक महफ़िलें अपने नाम दर्ज़ कर रही थी। नवोदित कवियों के लिए ये साहित्यिक बहार का दौर था। पुराने और स्थापित कवि व शायर बहुत सहयोगी थे। इस दौर में कविताओं में तुकबंदी से ज़्यादा भावपक्ष पर ध्यान दिया जाता था। गेय काव्य में मात्राएँ व वर्ण आदि देखे-गिने जाते थे तथा गीत को ही कविता की मूल विधा माना जाता था। अन्य कविताएँ 'शेष रस' की कविताओं में शुमार थीं। इस समय की धार में लखनऊ से वाहिद अली वाहिद, सर्वेश अस्थाना, राजकुमार भंडारी, देवल आशीष और मैं चंदरवरदाई व कालीदास बनने को उतावले थे। धीरे-धीरे कुछ नेता, व्यापारी संगठन और कुछ आईएएस हम लोगों को 'कवि जी' कहने लगे थे।

इसी दौर में हमारा परिचय राजभवन की लाइब्रेरी के अधिकारी दादा मुनीन्द्र शुक्ल जी से हुआ, जो साहित्य प्रेमी होने के साथ कई संयोजकों के मार्गदर्शक थे। अब हम, सर्वेश भाई और देवल इनके आभामंडल में आ चुके थे। हम लोग दादा के माध्यम से

कवि-सम्मेलनों में जाने लगे थे। एक दिन मुनीन्द्र दादा ने बताया कि, 'एक पोस्टकार्ड आया है, इटावा के पास भरथना है। इक्कीस फरवरी को कवि-सम्मेलन है। देवल और मुकुल को आमन्त्रित किया है। अभी 15 दिन शेष हैं कार्यक्रम के, ...तुम लोग हो आना।'

ख़ैर ये पन्द्रह दिन किसी तरह बीते। हम और देवल लखनऊ से ट्रेन पकड़कर भरथना के प्लेटफॉर्म पर शाम चार बजे प्रकट हुए। कार्यक्रम सात बजे से था। मार्जिन टाइम हम लोगों के पास ठीक-ठाक था। आधा घंटे स्टेशन पर ही मारे ख़ुशी के बैठे रहे। चाय पीकर लगभग पाँच-सवा पाँच बजे हम लोगों ने सोचा कि चलो, कार्यक्रम स्थल चलते हैं।

विद्यालय में कार्यक्रम था। बहुत ही छोटा नगर था, भरथना; सो दस मिनट में ही पैदल-पैदल पहुँच गये। जिस विद्यालय का नाम पोस्टकार्ड में लिखा था, हू-ब-हू वही विद्यालय सामने था पर गेट बन्द था। हम लोगों ने सोचा कि अन्दर प्रांगण में टेंट-वेंट बन्ध रहा होगा। गेट खटखटाया तो क़ाफ़ी देर बाद चौकीदार ने गेट खोला। हम लोंगों ने बताया कि हम कवि हैं, आज यहाँ कवि-सम्मेलन है। वो बोला— 'यहाँ तो भैया कछु नाय है आज, विद्यालय तो तीन दिन तक बन्द है।'

हमने उसे पोस्टकार्ड दिखाया, जो प्रबंधक साहब की ओर से लिखा गया था। उसने पोस्टकार्ड देखा और बोला— 'ई शुक्ल जी तो यहाँ के प्रबंधक कभी न रहे, न टीचर हैं। यहाँ के प्रबंधक तो फलाने यादव जी हैं। आज वहू आगरा गये हैं।'

तभी उधर से एक ब्लॉक प्रमुख टाइप नेता मोटर साइकिल से निकले। चौकीदार ने उन्हें रोककर पूरा वाक़या बताया। ब्लॉक प्रमुख बोले— आज पूरे भरथना मा कोई कबी-सम्मेलन नहीं हौ, होत तो हमहि न होते मुख्य अतिथि, हमें पता होत। भइया ऐसा करो बबुआद्वय! कि या तो ट्रेन पकड़ के वापस होइ लेओ या कहो तो हम रुके का इंतज़ाम कर दें, पर तुम लोगों को कोई बेवकूफ़ बना दिहिस है या किसी ने खुन्नस निकाली है।'

ख़ैर, विद्यालय का गेट बन्द और तथाकथित ब्लॉक प्रमुख जी अपने गंतव्य पर। अब हम लोगों ने निर्णय लिया कि वापस चलते हैं

स्टेशन। स्टेशन पहुँचे तो एक ट्रेन आँखों के सामने ही लखनऊ के लिए जा रही थी और चली भी गयी। अब हम लोग स्टेशन पर थे और जेब में सिर्फ़ उत्ते ही पैसे जितने में दो टिकट आ जाते। चाय भी पी ली तो समझो टिकट पर ग्रहण। भला हो कि देवल के पास चार-पाँच पान मसाले के पाउच थे, सो उसका टाइम कट रहा था। डर था कि टिकट लेने के पहले अगर देवल के पान मसाले ख़त्म हुए, तो देवल टिकट की बजाय पान मसाला न ख़रीद डाले। ख़ैर टिकट के पैसे हमने बड़े होने के नाते देवल से लेकर अपने पास धर लिये। पता चला कि ट्रेन आने में अभी तीन घण्टे हैं।

हम लोग प्लेटफॉर्म पर टहल ही रहे थे कि देखा स्टेशन मास्टर साब अपने कमरे में बैठे कोई साहित्यिक मैगज़ीन पढ़ रहे थे। हम लोगों को ख़ुशी हुई और थोड़ी हिम्मत बढ़ी। नींव का पत्थर रखने के मामले में हम देवल से सदैव बेहतर रहे। देवल थोड़ा शर्मीले किस्म के थे पर खुलने के बाद बहुत वाचाल और स्पष्टवादी। हमने देवल से कहा— 'चलो स्टेशन मास्टर से मिलते हैं। ख़ुशमिजाज़ से लग रहे हैं और साहित्यिक अभिरुचि के भी हैं; कुछ समय भी कटेगा और ये हो सकता है कि चाय भी पिला दें।

झिझकते हुए देवल भी हमारे पीछे स्टेशन मास्टर के कक्ष में घुसे। सर, थोड़ी बात करनी है ...कहते हुए बैठ गये। देवल ने दो क़दम आगे बढ़कर उनके पैर भी छू लिये। बात शुरू हुई तो हम लोगों ने उन्हें अपने ठगे जाने का पूरा क़िस्सा सुनाया। अब तक हम लोगों ने उनके दिल में सर्वोत्तम स्थान बना लिया था। उन्होंने हमें चाय पिलाई और अपने चपरासी को बुलाकर कान में कुछ कहा।

लगभग आधे घण्टे बाद पाँच-छह लोग स्टेशन मास्टर के कमरे में और आ गये। ये लोग भरथना के कवि थे, जिन्हें स्टेशन मास्टर ने संक्षिप्त सूचना पर बुलवा लिया। अब जो स्टेशन मास्टर साहब ने किया वो अद्भुत था। स्टेशन के प्रतीक्षालय में दरी बिछ गयी, छोटा-सा माइक लग गया, स्टेशन मास्टर को मिलाकर कुल सात कवि हो गये और प्रारम्भ हो गया वो कवि-सम्मेलन जो ईश्वर ने हम लोगों के लिए आपदा प्रबन्धन के चलते, स्टेशन मास्टर को माध्यम बनाकर आयोजित किया। ख़ूब आनन्द आया। यात्रियों ने ख़ूब तालियाँ बजायीं, हो सकता है कि कुछ की गाड़ियाँ भी छूट गयी हों।

अंततः इधर कवि-सम्मेलन समाप्त हुआ और उधर गाड़ी प्लेटफॉर्म पर लखनऊ की ओर मुँह किये खड़ी हो गयी। स्टेशन मास्टर ने हमें और देवल को सीट तक आकर बैठाया और ख़ूब आशीर्वाद दिया। ट्रेन के रेंगते ही हम दोनों लोगों की जेब में एक-एक लिफ़ाफ़ा रखकर चलती ट्रेन से उतर गये। हमने उन्हें ध्यान से देखा कि उनके नेत्र गीले हो चुके थे और वो जेब से रूमाल निकालते हुए अपने कक्ष की ओर जा रहे थे।

अब हम लोगों को याद आयी कि टिकट तो लिया नहीं। टीटी आ गया तब क्या करेंगे। इसी बीच हमको स्टेशन मास्टर के दिये हुए उन लिफ़ाफ़ों की याद आयी। लिफ़ाफ़ा खोलकर देखा, तो उसमें लखनऊ तक का टिकट, इक्यावन -इक्यावन रुपये तथा एक काग़ज़ पर यशस्वी भवः के नीचे स्टेशन मास्टर साहब के हस्ताक्षर थे, जो आज भी मेरे हृदय पर अंकित हैं।●

श्रोता की हाज़िर जवाबी

● अरुण जैमिनी

बागपत-बड़ौत के पास एक क़स्बा है अमीनगर सराय। वहाँ कवि सम्मेलन था। वेदप्रकाश सुमन जी काव्य पाठ कर रहे थे। उन दिनों वो एक कविता दहेज हत्या के विरुद्ध पढ़ते थे। उस कविता में एक नवविवाहिता की लाश नहर में बही जा रही है, और उस लाश से कवि का संवाद होता है।

सुमन जी ने कविता प्रारम्भ की— 'उठकर लहरों पर बैठ गयी फिर लाश हो गयी गतिशील। अब कवि का लाश से संवाद होता है।' इतना कहकर सुमन जी ने पीछे मुड़ के देखा। उस समय मैं और हरिओम पँवार जी कुछ बात कर रहे थे। सुमन जी ने लगभग हमें डाँटते हुए कहा— 'बात मत कीजिए आप लोग!'

हम तो सकपका कर चुप हो गये पर सामने से एक बुज़ुर्ग श्रोता खड़ा होकर ज़ोर से बोल पड़ा— 'तेरी तो लाश तीस साल से बोल्ले है, ये बिचारे जिन्दे भी न बोल्लें।' उसके बाद सुमन जी के साथ-साथ पूरा पंडाल ठहाकों से भर गया।●

अतुल कनक

अनोखा अभिनंदन समारोह

● अतुल कनक

बात 17 सितंबर 1988 की है। उस दिन मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के पेटलावद शहर में एक कवि-सम्मेलन था। कोटा से अग्रज कवि जगदीश सोलंकी, जिन्हें मैं बचपन से ही अंकल कहकर संबोधित करता रहा हूँ, भी इस टीम में शामिल थे और हम दोनों सुबह-सुबह देहरादून एक्सप्रेस में बैठकर अपनी मंज़िल की ओर रवाना हुए। देहरादून एक्सप्रेस इतनी महान एक्सप्रेस है कि रास्ते में आनेवाले हर स्टेशन पर अपनी इच्छानुसार रुकी। तय यह हुआ था कि रतलाम में ही आयोजक आएंगे और अपनी कार में हमें पेटलावद तक लेकर जाएंगे। मुझे आज भी याद है कि मैनाश्री मार्ग पर रहने वाले श्री हरीश शुक्ला उस कवि-सम्मेलन के आयोजक थे। मैं और जगदीश सोलंकी उस दिन देहरादून एक्सप्रेस से रतलाम तक पहुँचे। मुझे अगले दिन इसी स्टेशन से फ्रंटियर मेल पकड़कर अनिवार्य रूप से कोटा पहुँचना था, जबकि जगदीश सोलंकी को पेटलावद से ही अन्यत्र कवि-सम्मेलन के लिये निकलना था। आयोजकों के प्रतिनिधि रतलाम तक हमें लेने एक एंम्बेसेडर कार से आए थे। उन्होंने वादा किया कि कवि-सम्मेलन के बाद वो इसी

कार से मुझे रतलाम पहुँचा देंगे ताकि मैं फ्रंटियर मेल पकड़ सकूँ। हम पेटलावद पहुँचे। निश्चित समय पर कवि-सम्मेलन हुआ। कविसम्मेलन सफल रहा।

मुझे रतलाम के लिये निकलना था। पता चला कि जो कार हमें लेकर आई थी, वह खराब हो गयी है। अक्सर ऐसा होता है। आपको किसी काम से लेने आयी कार, काम के हो चुकने के बाद ख़राब हो जाती है। हो सकता है कि उस दिन पेटलावद के आयोजकों की ओर से भेजी जाने वाली कार सचमुच ख़राब हो गयी हो। लेकिन रतलाम से फ्रंटियर मेल पकड़ने की चिन्ता तो अपनी जगह क़ायम थी ही। आयोजकों ने किसी वक़ील की मोटर साइकिल का इंतज़ाम किया और वक़ील के मुंशी को ज़िम्मेदारी सौंपी कि मुझे रतलाम पहुँचाया जाये। पर धत् तेरे की, मोटर साइकिल को किक मारकर स्टार्ट किया तो पता चला कि उसकी हैड लाइट ख़राब है। कोई उत्साही व्यक्ति घर जाकर एक बड़ी टॉर्च ले आया। अब यह मेरी ज़िम्मेदारी थी कि मैं मोटर साइकिल पर पीछे बैठा हुआ चालक को रास्ता दिखाऊँ और अपनी मंज़िल तक पहुँचूँ। उस दिन समझ में आया कि कवियों के लिये क्यों कहा जाता है कि वो समाज को उजाला दिखाते हैं।

ख़ैर, मैं मुंशी जी के साथ पेटलावद से रवाना हुआ। बरसाती हवा चलने लगी और थोड़ी देर में बून्दा-बान्दी भी शुरू हो गयी। मुंशी जी की रफ़्तार बता रही थी कि कोई उनसे कितने ही आग्रह करे, लेकिन वो भारतीय लोकतंत्र के आदर्श वाक्य 'देर आयद लेकिन दुरुस्त आयद' पर अपने विश्वास को छोड़ने के लिये तैयार नहीं होंगे। मुझे फ्रंटियर मेल पकड़ना था और वो मालगाड़ी की गति से चल रहे थे। मैंने मुंशी जी से ज़िद्द की कि वो पीछे आ जाएँ और मुझे गाड़ी चलाने दें। मुंशी जी क्या करते? मेरी ज़िद्द के आगे समर्पण कर बैठे। अब मैंने फ्रंटियर मेल पकड़ने की ज़िद्द में मोटर साइकिल को फ्रंटियर मेल बना दिया। रास्ते भर सब ठीक रहा लेकिन रतलाम से ठीक पाँच किलोमीटर पहले शायद सड़क पर पड़े किसी बड़े पत्थर पर तेज़ गति से दौड़ रही मोटर साइकिल का अगला पहिया चढ़ा और उसके बाद मुझे बस इतना पता रहा कि मैं हवा में लगभग सात-आठ फुट ऊपर उछला। लेकिन फिर क्या हुआ। मुझे पता नहीं। लगभग पंद्रह दिन बाद, दो अक्टूबर को जब मामा का लड़का झालावाड़ से आया

मुझसे मिलने, तो मैंने अपने बदन पर बंधी पट्टियों और पास खड़ी माँ को देखकर पूछा– 'माँ, यह सच है या मैं सपना देख रहा हूँ।' माँ इतना कहकर चुप हो गयी कि इसे सपना ही समझ बेटा।

बाद में पता चला कि मोटर साइकिल से उछलने के बाद मैं छोटे पत्थरों के एक ढेर पर गिरा और बेहोश हो गया और मेरे सिर से ख़ूब सारा ख़ून बहने लगा। मुंशी जी होश में थे। उन्होंने पीछे आ रहे एक वाहन को रोका, जो संयोग से अस्पताल में सप्लाई के लिये दूध देनेवालों का वाहन था। उसी वाहन से मुझे अस्पताल लाया गया। जैसे-तैसे ख़बर पेटलावद पहुँची। चूँकि उस रात लोगों ने मुझे बहुत प्यार से सुना था, इसलिये जिसने सुना वह रतलाम की ओर चल दिया। अस्पताल में भीड़ लग गयी। उन दिनों मेरे घर में फोन नहीं था। इसलिये आयोजकों ने मेरे घर से क़रीब चार किलोमीटर दूर रहने वाले जगदीश सोलंकी के घर फोन किया। जगदीश जी तो पेटलावद कवि-सम्मेलन के बाद इंदौर के आयोजन में भाग लेने निकल गये थे। लेकिन आंटी याने श्रीमती सोलंकी रिक्शा करके बदहवास-सी मेरे घर पहुँचीं और उन्होंने दुर्घटना की ख़बर दी। माँ ने पूछा कि मेरे कितने लगी है? आंटी ने कहा कि उन्हें पता नहीं है, फोन पर बस इतना बताया गया है कि एक्सीडेंट हो गया है। माँ ने पूछा कि मेरी जान को कोई ख़तरा तो नहीं है ना? आंटी क्षत्राणी हैं। माँ का मन रखने के लिये झूठ कैसे बोलतीं। उन्होंने साफ कहा कि उन्हें कुछ पता नहीं है, बस– यह बताया गया है कि मैं रतलाम के अस्पताल में भर्ती हूँ। अफ़रा-तफ़री मचनी ही थी।

आनन-फ़ानन में पापा मेरे दो मित्रों को साथ लेकर रतलाम के लिये रवाना हुए। पापा बताया करते थे कि जब वो वहाँ पहुँचे तो अस्पताल पेटलावद और रतलाम से आए मेरे चाहनेवालों की भीड़ से भरा था और रतलाम के जाने-माने कवि अज़हर हाशमी किसी डॉक्टर से कह रहे थे कि मैं चाहे खड़े-खड़े बिक जाऊंगा, लेकिन इस लड़के के इलाज में कोई कमी नहीं रखियेगा। जो लोग संप्रदाय के आधार पर इंसानों की प्रवृत्तियाँ निर्धारित करते हैं, वो लोग जब अज़हर हाशमी की इस आतुरता को समझेंगे तो क्या कहेंगे– मैं नहीं जानता। यह अपनों-परायों से मिलने वाला सहज अपनत्व ही तो है जो निरंतर यात्राओं में रहने के बावजूद हिन्दी कवि-सम्मेलनों की परंपरा के

कवियों को सतत ऊर्जस्वित रखता है। वरना घर से लगातार दूर रहना किसके मन को अच्छा लगता है?

पापा और दोनों मित्र तीन दिन तक रतलाम ही रहे। इधर कोटा में मम्मी और बहनों का बुरा हाल था। पापा ने डॉक्टर को इस बारे में बताया तो उन्होंने कुछ सावधानियों के साथ मुझे कोटा ले आने की अुमति दे दी। मैं तो नीमबेहोशी में था। बताया गया कि जब तक मैं अस्पताल में रहा, अज़हर हाशमी लगातार वहाँ बने रहे। फिर मुझे कोटा ले आया गया।

पूरे बदन पर करीब चालीस टाँके आए थे। राजनीति में हालाँकि मेरी रूचि नहीं थी, लेकिन मुझे चीजें दो दो दिखने लगी थी। डॉक्टर ने कहा कि चोट के कारण आँख की माँसपेशियाँ ढीली हो गयी हैं, धीरे-धीरे सब ठीक हो जायेगा। ठीक हुआ भी। लेकिन आँख और सिर पर लगे टाँकों के निशान आज भी उस भयावह भोर की याद दिलाते हैं। जिसने भी उस मोटर साइकिल को बाद में देखा, उसने भरोसा ही नहीं किया कि उसे चलानेवाला ज़िन्दा भी रहा होगा। पापा के साथ रतलाम गये मेरे मित्र, टोकन और ओमेन्द्र का कहना था कि वह बाइक तो चार रुपये किलो के हिसाब से बिकी होगी। मज़ेदार बात यह रही कि उसी आयोजन समिति ने लोगों को सिर्फ़ यह बताने के लिये कि अतुल कनक ज़िन्दा बच गया है, अगले साल उसी आयोजन में मेरा नागरिक अभिनंदन किया। नगर में बाक़ायदा एक बिन्दौरी निकाली गयी। लेकिन मुझे तो चिन्ता वक़ील साहब की गाड़ी और मुंशी जी की कुशलता की थी। पेटलावद पहुँचने पर पता चला कि मुंशी जी के हाथ में मामूली चोट आयी थी और वो सकुशल हैं। वक़ील साहब की गाड़ी का बीमा था, इसलिये उन्हें भी कोई विशेष नुक़सान नहीं हुआ।

रहा सवाल अपना, तो अपुन तो नागरिक अभिनन्दन के लिये एक बार फिर पेटलावद पहुँच चुके थे। क्या इतिहास में ऐसा कोई दूसरा उदाहरण मौजूद है जहाँ जनता को सिर्फ़ यह बताने के लिये कवि को नागरिक अभिनंदन किया गया हो, कि पिछले साल मोटर साइकिल लेकर रवाना हुआ युवा कवि टूट-फूट कर ही सही, ज़िन्दा हालत में अपने घर पहुँच गया था।

कवि-कुनबा कलैण्डर (नवम्बर)

1 नवम्बर	जन्मदिन	अब्दुल अय्यूब ग़ौरी
	पुण्यतिथि	ब्रज शुक्ल घायल
2 नवम्बर	जन्मदिन	बरखा शुक्ला सिंह
	जन्मदिन	निसार पठान
	जन्मदिन	हाशिम फ़िरोज़ाबादी
3 नवम्बर	जन्मदिन	अंसार क़म्बरी
4 नवम्बर	जयन्ती	अशोक साहिल
	पुण्यतिथि	नवनीत हुल्लड़
5 नवम्बर	जयन्ती	ओमप्रकाश आदित्य
	जन्मदिन	शम्भू सिंह मनहर
	पुण्यतिथि	बाबा नागार्जुन
7 नवम्बर	जयन्ती	मुकुन्द कौशल
	जन्मदिन	गिरधर खरे
8 नवम्बर	जयन्ती	कृष्ण बिहारी नूर
	जन्मदिन	आशीष अनल
	जन्मदिन	शैलेष लोढ़ा
	जन्मदिन	पवन आगरी
11 नवम्बर	जयन्ती	बेढब बनारसी
	जयन्ती	कैलाश वाजपेयी
	जन्मदिन	आनन्द क्रान्तिवर्द्धन
	जन्मदिन	सन्दीप शर्मा
	पुण्यतिथि	कन्हैयालाल सेठिया
12 नवम्बर	जन्मदिन	प्रवीण शुक्ल
13 नवम्बर	जन्मदिन	विवेक यादव स्वर्णी
14 नवम्बर	जन्मदिन	बलवीर सिंह रंग
15 नवम्बर	जयन्ती	निर्भय हाथरसी
	पुण्यतिथि	जयशंकर प्रसाद
	जन्मदिन	हलचल हरियाणवी
	जयन्ती	के डी शर्मा हाहाकारी
	जन्मदिन	दीप्ति मिश्रा
	जन्मदिन	बृजेश द्विवेदी
16 नवम्बर	पुण्यतिथि	चन्द्रसेन विराट
17 नवम्बर	जन्मदिन	राजेश जैन राही

कवि-कुनबा कलैण्डर (नवम्बर)

18 नवम्बर	जन्मदिन	अनिल चौबे
	जन्मदिन	रमा सिंह
20 नवम्बर	जन्मदिन	कमलेश मौर्य मृदु
	पुण्यतिथि	फ़ैज़ अहमद फ़ैज़
23 नवम्बर	जन्मदिन	कीर्ति काले
24 नवम्बर	जन्मदिन	हुक्का बिजनौरी
25 नवम्बर	जयन्ती	ओम व्यास ओम
26 नवम्बर	जन्मदिन	मुनव्वर राणा
27 नवम्बर	जयन्ती	हरिवंशराय बच्चन
	पुण्यतिथि	शिवमंगल सिंह सुमन
28 नवम्बर	पुण्यतिथि	रामरिख मनहर
30 नवम्बर	जन्मदिन	ज्योत्सना शर्मा

कवि-सम्मेलन संग्रहालय

कवि सम्मेलन संग्रहालय

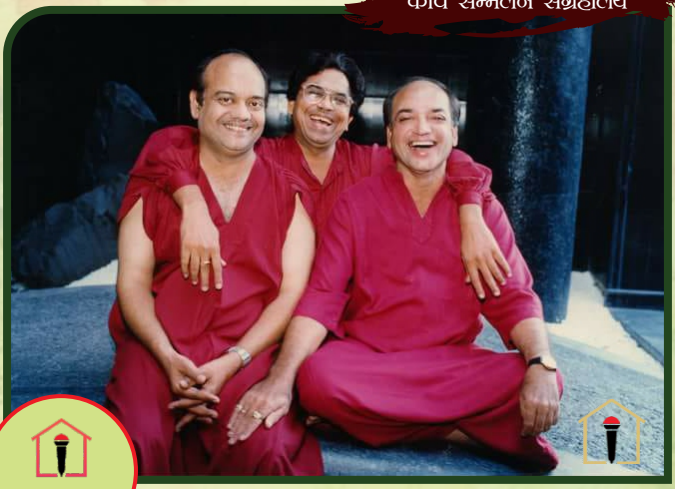

संग्रहालय

ओशो आश्रम में श्री सुरेन्द्र शर्मा,
डॉ. अशोक चक्रधर तथा श्री मधुप पाण्डेय

पुष्पांजलि के
नवीनतम अंक के
अवलोकनार्थ
क्लिक करें

देश की पहली साहित्यिक ई-पत्रिका जो पढ़ी और सुनी भी जा सकती है तथा जिसमें संगीत के लिंक्स भी है जिनसे निर्मल आनंद उठाया जा सकता है।

मूल्य : मात्र आपकी मुस्कान

सामने दिए गए चिह्न को दबाने से आपका सन्देश स्वचलित रूप से हमें पहुँच जाएगा और नियमित पत्रिकाएँ भेजने के लिए आपका मोबाइल नं. पंजीकृत हो जाएगा।

8610502230 (केवल संदेश हेतु)
(कृपया अपना नाम व शहर का नाम भी लिखें)

अपना अपना बसन्त

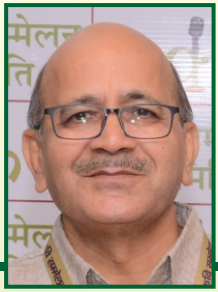

सुभाष काबरा

सभा बसन्त की थी, सभागृह बसन्त बाबू का और अध्यक्षता बसन्ती की। जब मैं सभागृह के द्वार के सामने से गुज़रा, तो भीतर से ख़ुश्बू का एक झोंका आया, जो देसी नहीं था।

मन हुआ कि लौट जाऊँ लेकिन पत्नी ने स्कूटर की क़सम देकर भेजा था कि बड़ी ख़राब इमेज है तुम्हारी। हमेशा बुद्धुओं के साथ उठते-बैठते हो। आज बुद्धिजीवियों की सभा में होकर ही आना। बुद्धिजीवियों की सभा में प्रवेश पाना इतना आसान भी नहीं था। द्वार पर ही एक साहित्यश्री मिल गए। बोले— "कहाँ जा रहे हो?"

मैंने कहा— "बसन्त सभा में।"

वे चौंके। पूछा— "बसन्त सभा से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है?"

मैंने कहा— "क्यों नहीं है? मैं भी इस देश का नागरिक हूँ। सारी ऋतुएँ भुगतता हूँ और मेरा ख़याल है कि बसन्त भी उनमें से एक है। फिर ये सभागृह मेरे मित्र बसन्त बाबू का है और मैंने बसन्ती की फिल्म इक्कावन बार देखी है। मेरा हक़ बनता है।"

साहित्यश्री दु:खी होकर मुड़े, तो मैं चुपके से भीतर घुस गया।

भीतर अपने मुरझाये हुए चेहरों के साथ शहर भर के बुद्धिजीवी उपस्थित थे। केवल एक व्यक्ति ख़ुश था और उसकी ख़ुशी का एकमात्र कारण ये था कि वो बुद्धिजीवी नहीं था। वो फोटोग्राफर था। मुझसे तपाक से मिला और बोला—"भाईसाहब, इन लोगों के फोटो तो मैं खींच ही रहा हूँ। बाद में बगीचे के कुछ फोटो जोड़कर बसन्त से जोड़ भी दूंगा, लेकिन विषय को लेकर कुछ परेशान हूँ। ये बसन्त क्या होता है? कहाँ होता है?"

मैंने कहा, "बसन्त, बसन्त होता है। और अलग-अलग लोगों का अलग-अलग जगहों पर होता है।"

वो भ्रमित हो गया। बोला, "...और वो बाग़ियों वाला बसन्त ?"
मैंने कहा, "सर्जरी बगिया अब बिल्डरों के पास है। वहाँ इमारतें बन गयी हैं।"

फोटोग्राफर को भ्रमित छोड़कर मैं मंच के पास पहुँच गया। थोड़ी देर बाद प्रमुख वक्ता माइक पर आये। मैं उन्हें पहचान गया। ये वही थे, जिन्हें हर बार पद्मश्री मिलते-मिलते रह जाती है। वैसे भाग्यश्री और श्रीदेवी इनके साथ रहती हैं। आज भी दोनों साथ ही थीं। प्रमुख वक्ता बोले, और ख़ूब बोले। उन्होंने विषय को छोड़कर ढेर सारी बातें की। पहले उन्होंने साहित्य की ऐसी-तैसी की, फिर अकादमी की, फिर फिल्मों की और अन्त में श्रोताओं की। जाते-जाते कह गये कि ऐसे मौसम में बसन्त सभा का आयोजन ही ग़लत है। मेरा शाप है कि इस सभा के आयोजक अगला बसन्त नहीं देख पाएंगे। लोगों ने इस पर भी ताली पीटी, मैंने अपना सिर पीटा।

दूसरे वक्ता दयालू थे। उन्होंने ज़्यादा वक़्त नहीं लिया। वे बसन्त की तुक सन्त, महन्त और अन्त से मिलाकर कुछ बोले। उनकी बात समझ में न आने पर तालियाँ बजीं, जिसे सम्मान समझकर वे गुज़र गये। तभी सभागृह के स्वामी बसन्त बाबू आ गये। आगे का कार्यक्रम रोककर उनका स्वागत किया गया और माइक उनके हवाले कर दिया गया। बसन्त बाबू ने बताया कि इस शहर में उनके चौदह सभागृह हैं। जो जन्म से लेकर मृत्यु तक के उत्सवों के लिए किराये पर दिये जाते हैं। उनमें आप कव्वाली से लेकर कैबरे तक कुछ भी करवा सकते हैं। पुलिस कमिश्नर उनके दोस्त हैं। बसन्त बाबू ने ये भी बताया कि वे साहित्य प्रेमी हैं। दिनकर से लेकर दाऊद तक की किताबें उनके पास हैं। उन्होंने ये घोषणा भी कर दी कि आज के समारोह के लिए उन्होंने समोसे और चाय का भी इन्तज़ाम किया है। सब लोग ठण्डे होने से पहले समोसे खा लें तो अच्छा रहेगा। बिना घोषणा किये मध्यान्तर हो गया। सब समोसे खाने चले गये। बचे हम दो। फोटोग्राफर और मैं। मैंने फोटोग्राफर से कहा कि मैं तो अनामन्त्रित हूँ, तुम समोसा खा लो। वो बोले नहीं साहब, आप इन लोगों को जानते नहीं हो। बाद में समोसे के पैसे पेमेंट में से काट लेते हैं।

मध्यान्तर में बुद्धिजीवियों के छोटे-छोटे ग्रुप बन गये। किसी ने किसी को अपने असली प्रेमी से मिलवाया, तो किसी ने किसी को

सनकी प्रकाशक से। कोई अपनी किताब बाँटता रहा, तो कोई रसूख़वालों के समोसे पर चटनी लगाता रहा। कोई नामचीनों के साथ फोटो खिंचवाता रहा तो कोई समोसे गिनता रहा। बसन्त बाबू नाराज़ थे, कि उनका बुलाया हुआ पत्रकार नहीं आया।

भोले थे बसन्त बाबू। असली पत्रकार भी शाम सात बजे के बाद किसी सभा में नज़र आते हैं क्या? निमन्त्रण पत्र पत्रकार के पास था ही। न्यूज़ ही तो बनानी थी और बसन्त बाबू को हाईलाइट करना था, सो वो कर ही देगा। वैसे भी ये हमारे दौर का दुर्भाग्य ही तो है कि यहाँ जिसने चार पंक्तियाँ लिख लीं, वो लेखक हो गया। जिसने आठ पढ़ लीं, वो पाठक हो गया। और जिसने न कुछ लिखा, न पढ़ा, वो सम्पादक हो गया।

बसन्त बाबू के जाने पर दूसरा सत्र शुरू होने से पहले ही सभागृह का मैनेजर आ गया और घड़ी दिखाकर बोला कि इस बार भी आप लेट हो गये। थोड़ी देर बाद यहाँ डांस का प्रोग्राम है। टिकटें बिक चुकी हैं। शो हाउसफुल है। आप लोग ये हॉल ख़ाली कर दीजिये। इस अपमान के बावजूद सारे लोग बड़े ख़ुश थे और कह रहे थे कि आज की सभा शानदार रही। ऐसी सभाएँ रोज़ होनी चाहिएँ। ताकि सब अपने-अपने हिस्से का बसन्त लेकर अपने-अपने घर लौट सकें।

मैंने सोचा कि जब इत्ते बड़े-बड़े लोग कह रहे हैं, तो सच ही कह रहे होंगे। ये सब अपने-अपने हिस्से का बसन्त लेकर लौट रहे हैं। एक मैं ही अभागा हूँ जो ख़ाली हाथ आया था और ख़ाली हाथ जा रहा हूँ। ●

कवि-सम्मेलन समाचार

कवि-सम्मेलन से सम्बन्धित समाचार पढ़ने के लिए कविग्राम ने अपनी वेबसाइट पर 'समाचार लोक' नाम से अलग पृष्ठ प्रारम्भ कर दिया है। हमारा प्रयास रहेगा कि इस पृष्ठ पर आपको अधिक से अधिक कवि-सम्मेलनों के समाचार प्राप्त हो सकें। 'कविग्राम' वेबसाइट के इस पृष्ठ पर जाने के लिए दाहिनी ओर बने आईकॉन पर क्लिक करें :

15 अक्टूबर। नयी दिल्ली। कचपन काव्यपाठ प्रतियोगिता में तीन अलग-अलग आयु वर्गों में कुल 284 प्रतिभागियों ने भाग लिया। भारत के चौदह राज्यों और भारत से इतर संयुक्त अरब अमीरात, संयुक्त राज्य अमरीका, इटली और कनाडा से भी प्रविष्टियाँ प्रतियोगिता में सम्मिलित हुईं। यूट्यूब के लाइक्स तथा व्यूज़ के आधार पर विजेताओं की सूची अधोलिखित है—

कचपन
किलकारी कविता की

वर्ग 1 (24 जून 2012 से 23 जून 2016 तक जन्मे प्रतिभागी)

प्रथम पुरस्कार	:	अक्षरा शुक्ला	(लखनऊ, उत्तर प्रदेश)
द्वितीय पुरस्कार	:	आरव सेठ	(नयी दिल्ली)
तृतीय पुरस्कार	:	वेदान्त मिश्रा	(रायसेन, मध्य प्रदेश)

वर्ग 2 (24 जून 2008 से 23 जून 2012 तक जन्मे प्रतिभागी)

प्रथम पुरस्कार	:	चारवी रूपराय	(नयी दिल्ली)
द्वितीय पुरस्कार	:	दैविक कुमार	(नयी दिल्ली)
तृतीय पुरस्कार	:	कार्तिक कौशल	(नयी दिल्ली)

वर्ग 3 (24 जून 2004 से 23 जून 2018 तक जन्मे प्रतिभागी)

प्रथम पुरस्कार	:	मुस्कान श्रीवास्तव	(अयोध्या, उत्तर प्रदेश)
द्वितीय पुरस्कार	:	हर्ष पिपलिया	(राजकोट, गुजरात)
तृतीय पुरस्कार	:	तन्मय शगोत्रा	(नयी दिल्ली)

उपरोक्त प्रतिभागियों को पुरस्कार राशि (क्रमशः रु. 3100, 2100 तथा 1100) तथा प्रमाण-पत्र प्रदान किया जाएगा। इनके अतिरिक्त इन पचास श्रेष्ठ प्रतिभागियों को कविग्राम की ओर से डिजिटल प्रमाण-पत्र प्रेषित किया जा रहा है—

नयी दिल्ली : अर्थ मित्तल, संस्कार जैन, दीया मनचंदा, मान्या निगम, मायरा शर्मा, नक्श सैनी, अंशिका पाण्डेय, शिवन्या, आन्या भारद्वाज, मुदिता शर्मा, आन्या अरोड़ा, सजल मखीजा, आरुष सिंघल, मधुर शर्मा, आराध्या मणि त्रिपाठी, आयुष, जिविका जैफ, प्रथम चुघ, वसुन्धरा गांधी, तनिष्का कंसल, गौरांश भारद्वाज, अरीब, कौस्तुभ भारद्वाज, धृति गर्ग, जतिन जिन्दल, गरिमा यादव, आराध्य भारद्वाज, कृष्टी विजयरण, अलीना अंसारी, अमिषि वारेजा

अम्बाला : खुशी कौशिक, मन्नत सैनी, श्रेय आनन्द, तनु बिसला, जाह्नवी सिंह

जालंधर : अर्पिता, प्रभसिमर कौर, दक्षिता कपूर, अमायरा

इन्दौर : अरिन्दम शर्मा

मुरादाबाद : अभिज्ञान आलोक पाण्डेय

भोपाल : अरना सिंह

प्रयागराज : कार्तिकेय मौर्या

बदायूँ : आदित्य उपाध्याय

ग़ाज़ियाबाद : आरोही गुप्ता,

कोल्हापुर : एकांश अतुल महाजन

बांसवाड़ा : धात्री झा

जोधपुर : रियानी जायसवाल

बंगलूरु : अत्रिज खरे

बलिया : रुषाली अग्रवाल

कचपन की सभी वीडियो कविग्राम की वेबसाइट पर 'कचपन' पेज पर उपलब्ध हैं। भविष्य में कविग्राम की ऐसी ही ढेर सारी योजनाओं की सूचना प्राप्त करने के लिए तथा कविता और कवि-सम्मेलन की दुनिया से जुड़े रहने के लिए नीचे बने सोशल मीडिया आईकॉन्स को स्पर्श करें–

वेबसाइट | फेसबुक | इंस्टाग्राम | यू-ट्यूब | ट्विटर

टेलीग्राम | जी-मेल | व्हाट्सअप

कविग्राम

कविग्राम के पिछले अंक पढ़ने के लिये अंक को स्पर्श करें

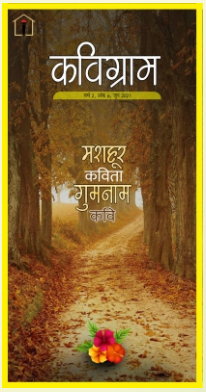

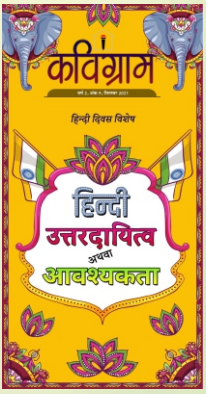

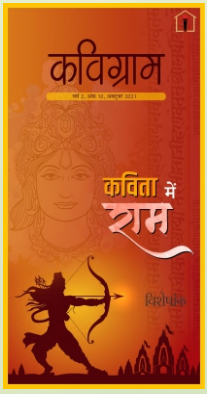

पत्रिका

KAVIGRAM.COM